# समाधानात्मक भौतिकवाद

## अध्याय 1

## समाधान और द्वंद्व

ईश्वरवादी :– ईश्वर ही श्रेष्ठ, जगत असार, जगत ईश्वर की कृपा से उत्पन्न

भौतिकवादी :– भौतिकता अपने में द्वंद्व, संघर्ष विधि से भौतिक संसार में विकास

द्वंद्व के मूल में अंतर्विरोध (स्व–विकास का आधार) एवं बाह्य विरोध (स्व–वैभव प्रदर्शन का आधार)

सह–अस्तित्ववादी :– प्रत्येक एक वातावरण सहित संपूर्ण; त्व सहित व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदार; परस्पर नैसर्गिकता में ही आवेशित एवं स्वभाव गति, स्वभाव गति में विकास व आवेशित गति में ह्रास की ओर अग्रसर; स्वभाव गति में सहज ही नैसर्गिकता, वातावरण एवं परंपरा अनुकूल, अतः गुणात्मक एवं मात्रात्मक रूप में विपुलता की ओर परिवर्तित

शिशु की स्वभाव गति– न्याय का याचक, सही कार्य–व्यवहार का इच्छुक, सत्यवक्ता; अनुकूल परस्परता, नैसर्गिकता, वातावरण, परिस्थिति मिलने पर न्याय प्रदायी क्षमता, सही कार्य–व्यवहार करने की योग्यता, सत्यबोध(संपन्नता) होने की पात्रता

पदार्थ–अवस्था में आवेशित गति भी पूरक; परिणाम अनुषंगी

प्राण–अवस्था में सानुकूल वातावरण= ऋतु संतुलन; बीज अनुषंगी

ऋतु संतुलन– आनुपातिक वर्षा, शीत, गर्मी (न्यूनतम व अधिकतम सीमा) + धरती, हवा, उर्वरक संयोग; शीत, ऊष्ण, वर्षा, हवा, धरती, उर्वरकता का संतुलन धरती की स्वभाव गति प्रतिष्ठा के आधार पर

जीवों की स्वभाव गति व सानुकूलता – प्रधानतः आहार, विहार व प्रजनन कार्यों में; वंशानुषंगीयता पूर्वक नियंत्रित

शाकाहारी – बड़ी आँत, नाखून व दाँत सामान्य

मांसाहारी – छोटी आँत, नाखून व दाँत नुकीले

संतुलन क्रम में जीव संसार शाकाहारी व मांसाहारी

तीनों अवस्थाएँ एक दूसरे के लिए परस्पर पूरक; जबकि मानव द्रोह, विद्रोह, शोषण, युद्ध पूर्वक स्वयं क्षतिग्रस्त व भोग, बहुभोग हेतु शेष प्रकृति को क्षतिग्रस्त

व्यवस्था ही समाधान एवं अव्यवस्था ही समस्या

मानव मानवत्व सहित व्यवस्था एवं समाधान; समाधान, न्याय, शांति, सुख मानव को सहज/स्वाभाविक रूप में स्वीकृत

सुख के लिए रूचि और प्रलोभन के पीछे भागना

परंपरा = शिक्षा, संस्कार, संविधान एवं व्यवस्था का अविभाज्य रूप; कल्पनाशीलता एवं कर्मस्वतंत्रता पूर्वक इनका एक स्वरूप; परंपरा अपने अनुरूप अगली पीढ़ी का दिशा निर्देशन, अभी तक इनका कोई सार्वभौम रूप सर्वमानव को स्वीकृत नहीं

पदार्थ अवस्था – प्राण अवस्था – जीव अवस्था – ज्ञान अवस्था (क्रमिक विकास)

मानव शरीर प्राण अवस्था की एक रचना; विकास क्रम के अध्ययनपूर्वक शरीर रचना संबंधी स्पष्टता, जीवन का अध्ययन नहीं; जबकि शरीर जीवन की अभिव्यक्ति व जागृति के प्रमाणीकरण के लिए माध्यम

अध्याय 2

मानव स्वरूप का इतिहास

1. नस्ल, रंग का आधार – भौगोलिक, नैसर्गिक परिस्थितियाँ
   पूजा, अर्चना, योग, साधना, उपासना का आधार– कल्पनाशीलता व श्रेष्ठता के प्रति निष्ठा; सुविधा संग्रह व भोग– द्रोह, विद्रोह, शोषण, युद्धपूर्वक
   इनमें विविधता के आधार पर विविध समुदाय
2. जंगल– शिला– धातु, कबीला, ग्राम– दास– संघर्ष, विज्ञान– समाधान युग (प्रतीक्षित अपेक्षित)
   प्राकृतिक एवं पाशविक भय क्रमशः कम; मानव में निहित अमानवीयता का भय क्रमशः अधिक
3. वैचारिक इतिहास
   आदर्शवाद(रहस्यमूलक ईश्वर केंद्रित चिंतन)= ईश्वरवादी विचार = अध्यात्मवाद (अध्यात्म ज्ञान), अधिदैवीवाद(अधिदैवी ज्ञान), अधिभौतिकवाद(अधिभौतिक ज्ञान)– व्यवहार रूप में रहस्यमय
   भौतिकवाद (अस्थिरता व अनिश्चयतामूलक वस्तु केंद्रित)– तर्कसंगत विधि से उन्मादत्रय का प्रज्वलन– सुविधावादी व्यवस्था का विचार– व्यवहार रूप में संग्रह
4. सांस्कृतिक इतिहास
   - वस्त्र व अलंकार के तरीके
   - शादी विवाह के रीति – रिवाज
   - उत्सव के तरीके
   - शोक संवेदनाओं के तरीके
   - नृत्य, संगीत, गीत, सजावट, स्वागत के तरीके

   प्रधानतः भक्ति और श्रृंगारिक प्रकृति सहज महिमाओं को आधार बनाकर व्यक्त

5. आर्थिक इतिहास – मानव परंपरा में एक आयाम
   जंगल युग में– जंगल ही अर्थ, जंगल रहने व खाने की वस्तु प्राप्ति स्थली
   शिला युग में – जंगल एवं शिला उपयोगी वस्तु
   आहार, आवास एवं अलंकार के रूप में आवश्कता
   अधिक सुविधा एकत्र कर पाने वाले (व्यापारी – लाभोन्माद) एवं क्रूर प्राणियों की हत्या कर पाने वाले वाले (राजा– परस्पर युद्ध, लूट) का सम्मान

पाप, अज्ञान, स्वार्थ दूर होने का आश्वासन दे पाने वाले का सम्मान– गुरू
वर्तमान में सर्वाधिक संग्रहकर्ता– राजनेता, व्यापारी (उत्पादन विहीन, उत्पादन सहित), नौकरी करने वाले
संग्रहवादी प्रवृत्ति के कारण धार्मिक राज्य से आर्थिक (धर्मविहीन) राज्य
भय की तुलना में आस्था से राहत महसूस होती है।
वर्तमान में अधिकारी– कार्यपालिका (शिक्षातंत्र एक विभाग), न्यायपालिका एवं विधायिका (जनादेश के आधार पर) के रूप में
राजतंत्र– राजा कभी गलती नहीं करता
जनतंत्र– आदमी वोट देते समय गलती नहीं करता
आम आदमी– सर्वकालीन, अर्ध, अल्प, शून्यकालीन उत्पादन कार्य; सभी धन संग्रह में व्यस्त
राजनेता– स्वयं सर्वाधिक धन संग्रह; दूसरे को बड़ी मेहनत का पाठ + धन संग्रह न करने की झूठी सफाई
धर्मनेता – अपार धन संग्रह; दूसरों को त्याग, वैराग्य का पाठ + स्वयं को उपकारी, त्यागी, असंग्रही घोषित करना

6. राजनैतिक इतिहास –

शक्ति केंद्रित शासन के एकाधिकार का प्रभाव क्षेत्र के रूप में राज्य की पहचान

धार्मिक राजनीति– ईश्वर सर्वशक्ति केंद्रित सत्ता, राजा ईश्वर का प्रतिनिधि; उपदेश– राजा व गुरू के करने की जगह कहने को देखो; ईश्वर को रिझाने वाले व उसकी महिमा की पूजा वाले कर्म ही पुण्य, अन्यथा पाप; पापी को नियंत्रित करने हेतु धार्मिक दंडनीति (दण्ड, दमन, प्रायश्चित)/संविधान

विज्ञान युग/आर्थिक राजनीति– पुण्य से मिलनेवाली भोग वस्तुएँ, पैसे से उपलब्ध; तथाकथित पाप करने वालों के पास तथाकथित पुण्यफल संबंधी भोग्य वस्तुएँ उपलब्ध

7. धार्मिक इतिहास –

परंपरागत धर्म का मूल तत्व ईश्वर, आत्मा, ईश्वर वाक्य, ईश्वर आज्ञा; ईश्वर स्वयं रहस्यमय व ईश्वरवाणी में विविधता; इस आधार पर दूसरे समुदाय को मिटाने हेतु परस्पर संघर्ष हेतु धन/सुविधा संग्रह– शोषण पूर्वक। इस हेतु मौलिक कल्पनाशीलता व कर्मस्वतंत्रता का नियोजन; हर मानव में सुख, शांति की अपेक्षा, पर हर धर्म परस्पर युद्ध, संग्रह, भोग में तत्पर

अनुसंधान पूर्वक अस्तित्वमूलक मानव केंद्रित चिंतन ज्ञान= मध्यस्थ दर्शन, सह–अस्तित्ववाद(मानववाद) का प्रतिपादन

जीवन ही द्रष्टा, ज्ञानत्रय पूर्वक मानव स्वयं में व्यवस्था व समग्र व्यवस्था में भागीदार

मानव की चाहना :– प्रमाण त्रय + सर्वतोमुखी समाधान पूर्वक जीना

सर्वतोमुखी– विविध/हर आयाम, कोण, दिशा, परिप्रेक्ष्य, देश, काल

अस्तित्व= सह–अस्तित्व= सत्ता में संपृक्त प्रकृति। इन तथ्यों के आधार पर जीने हेतु वाद–त्रय का प्रणयन

## अध्याय 3

### समाधानात्मक भौतिकवाद

समाधान= संपूर्णता, पूर्णता के अर्थ में प्रमाणपूत अवधारणा

संपूर्णता– सत्ता में संपृक्त प्रकृति, हर इकाई अपने वातावरण सहित संपूर्ण

पूर्णता– पूर्णता त्रय व इसकी निरंतरता, इस हेतु जागृति के रूप में प्राप्त ज्ञान, दर्शन,आचरण

अवधारणा– जाना, माना, पहचाना हुआ

समाधानात्मक भौतिकवाद– भौतिक, रासायनिक वस्तुओं को जानने, मानने, पहचानने, निर्वाह करने के क्रम में भाषा शैली सहित संप्रेषित करना

वास्तविकता= सत्ता में संपृक्त जड़–चैतन्य प्रकृति के रूप में नित्य वर्तमान

चैतन्य प्रकृति गठनपूर्ण परमाणु; जड़ प्रकृति भौतिक रासायनिक रचना विरचना के रूप में कार्यरत

पदार्थ अवस्था का स्वरूप= परमाणु एवं उनसे बनी रचनाएँ

प्राणावस्था–प्राणकोषा व उनसे रचित रचनाएँ=अन्न–वनस्पति, जीव शरीर, मानव शरीर

अध्याय 4

अस्तित्व एवं अस्तित्व में परमाणु का विकास

अधिभौतिकवाद– चेतना से पदार्थ उत्पन्न

भौतिकवाद– पदार्थ से चेतना निष्पन्न

सह–अस्तित्ववाद– चेतना एवं पदार्थ का अविभाज्य वर्तमान

चेतना= सत्ता, अरूप, ऊर्जा, शून्य, ज्ञान, व्यापक, नित्य, ईश्वर, निरपेक्ष– गति और दवाब विहीन स्थिति

प्रकृति=रूपात्मक, इकाइयाँ अनन्त – गति एवं दवाब(वातावरणवश) सहित वर्तमान

सह–अस्तित्व ही परम धर्म, परम भाव; भाव (मूल्य, मौलिकता) एवं इकाई की अविभाज्यता

मूल्यों का ही आदान–प्रदान एवं पहचान, क्योंकि परस्परता में ही पूरकता, पहचान एवं व्यंजनाएँ

स्थितिपूर्ण सत्ता में संपृक्त प्रकृति सत्ता में अनुभव पर्यंत विकास और जागृति के लिए प्रवर्तित

विकास= पूर्णतात्रय; जागृति= समाधान, प्रामाणिकता

त्व सहित व्यवस्था के रूप में क्रियापूर्णता प्रमाणित

प्रामाणिकता के रूप में आचरणपूर्णता प्रमाणित

रूपात्मक अस्तित्व– प्रकृति की मूल इकाई परमाणु, परमाणु ही विकासपूर्वक गठनपूर्ण; शेष रचनाएँ विकास क्रम में; प्रकृति= चार अवस्था, दो वर्ग

पद चक्र व पद मुक्ति– 4 प्रकार– प्राणपद चक्र, भ्रांतिपद चक्र, देवपद चक्र, दिव्य पद चक्र / पद मुक्ति

प्रकृति में परस्पर आदान–प्रदान एक स्वाभाविक प्रक्रिया; अनन्तर तुष्टि व स्वभाव गति

प्रकृति में वैविध्यता= विकास क्रम में अनेक यथास्थितियाँ

प्रकृति= पदार्थ= पद भेद से अर्थ भेद को प्रकाशित करनेवाली वस्तुएँ

प्रकृति नित्य क्रियाशील; क्रिया= श्रम, गति, परिणाम

यथार्थता, वास्तविकता एवं सत्यता के अध्ययनपूर्वक निर्भ्रमता सुनिश्चित

स्व की स्वेच्छापूर्वक, स्वप्रेरणावश अभिव्यक्तिवश स्वयंस्फूर्त– क्रिया के रूप में; वातावरण व नैसर्गिकतावश स्फुरण– परस्परता में पहचानने, निर्वाह करने के रूप में

चैतन्य इकाई– गठनपूर्ण; फलस्वरूप स्थिरतासहित अक्षय शक्ति बल संपन्न; जड़ परमाणु में मात्रात्मक एवं गुणात्मक परिवर्तन; चैतन्य परमाणु में सिर्फ गुणात्मक परिवर्तन– भ्रम से जागृति पर्यंत

सह–अस्तित्ववश ही जड़–चैतन्य के संयुक्त प्रकाशन क्रम में जीव और ज्ञान अवस्था

अस्तित्व ही विकास, विकास की क्रम, क्रम ही व्यवस्था, व्यवस्था ही स्वयं नियति

जीवन सूक्ष्म, शरीर स्थूल; अधिक शक्ति व बल(जीवन), कम शक्ति व बल(शरीर) के माध्यम से अभिव्यक्त

जीवन की शक्ति अक्षय; जड़ प्रकृति की प्रत्येक इकाई में परिवर्तनशीलता के कारण शक्तियों की क्षरणशीलता

संपूर्णता (नियंत्रण, क्रियाशीलता और बलसंपन्नता) पूर्वक ही इकाई का आचरण ध्रुवित(स्थिर); नियमपूर्वक ही पहचानना, नियंत्रण का तात्पर्य परस्परता में पहचानने हेतु इकाई का अपने में संपूर्ण होना

क्रियाशीलता स्वयं बल का द्योतक और क्रिया स्वयं नियंत्रित रहने का द्योतक; घिरे रहने के कारण नियंत्रण, डूबे रहने के कारण क्रियाशीलता और भींगे रहने के कारण बलसंपन्नता

गति= वर्तुलात्मक व कंपनात्मक; नैसर्गिकता(परस्परता) स्वभाव गति में होनेवाली स्थिति

पूरकता– परस्पर स्वभाव गति की स्थिति में होनेवाला आदान–प्रदान(वातावरण)

प्रत्येक इकाई एक–दूसरे के लिए नैसर्गिक

जैसे–जैसे परमाणु विकसित होता है– कंपनात्मक गति का बढ़ना और स्थिरता व्याख्यायित; इसी क्रम में गठनपूर्णता, फलस्वरूप कंपनात्मक गति, वर्तुलात्मक गति से अधिक

जड़ प्रकृति में केवल परावर्तन; जबकि चैतन्य प्रकृति में प्रत्यावर्तन और परावर्तन

मानव में परावर्तनपूर्वक प्रत्यावर्तन में समाधान अपेक्षित

श्रम(बल) धर्म और स्वभाव के रूप में; गति स्वभाव और गुण के रूप में; परिणाम रूप और अमरत्व सहित वर्तमान

समाधान की अवधि तक बल/श्रम का प्रयोग होता ही है क्योंकि वातावरण व नैसर्गिकता के दवाब को सहना है। इससे मुक्ति हेतु विश्राम की अपेक्षा

गठनपूर्णता पूर्वक श्रम और गति अक्षय

प्रत्यावर्तन और परावर्तन में सामरस्यता की स्थिति में मनुष्य में समाधान

बलसंपन्नता ही मूल चेष्टा का कारण; मूल चेष्टा के बिना ऊर्जा का परिचय नहीं

संपृक्तता स्वयं बल संपन्नता; बल संपन्नता स्वयं मूल चेष्टा; मूल चेष्टा स्वयं क्रिया; क्रिया स्वयं श्रम, गति, परिणाम; श्रम, गति, परिणाम स्वयं विकास और इसकी निरंतरता

निश्चित गठन व रचना परस्पर पहचान का द्योतक

जीवन संचेतना जीवावस्था में अध्यास के रूप में प्रभावित; शरीर रचना वंशानुषंगी; परंपरागत क्रियाकलाप और विन्यासों को गर्भावस्था से ही स्वीकारने और जन्म के अनन्तर अनुकरण करने की प्रक्रिया ही अध्यास

मानव शरीर वंशानुषंगी, संचेतना संस्कारनुषंगी

जीवन(मानव) संचेतना में 5 शक्तियों की पहचान परावर्तन और प्रत्यावर्तन क्रियाकलाप में; 10 क्रिया समुच्चय ही जीवन संचेतना

संपूर्ण भौतिक और रासायनिक संसार परावर्तन क्रम में इन्द्रियसन्निकर्षपूर्वक पहचानने को मिलता है।(रूप और गुण)

मूल्य व अस्तित्व(स्वभाव और धर्म) प्रत्यावर्तन में ही पहचानने में आता है; फलतः निर्वाह करने की प्रणाली समीचीन

भौतिक संसार और बौद्धिक संसार का निर्वाह और पहचान संज्ञानशीलता व संवेदनाशीलता की संतुलित पद्धति से है।

अनुभव बल को व्यक्त करने के क्रम में विचार शैली व जीने की कला अपने आप में संप्रेषित;जीने की कला = संबंध और मूल्यों को पहचानना

अस्तित्व= सह–अस्तित्व– विकास क्रम– विकास– जागृति– परावर्तन और प्रत्यावर्तन– अस्तित्व में अनुभूति– सत्यत्रय में निर्भ्रम

स्थिति सत्य = सत्ता में संपृक्त प्रकृति; वस्तु स्थिति सत्य = दिशा, काल, देश; वस्तुगत सत्य = रूप, गुण, स्वभाव, धर्म

वस्तु(रूप)की पहचान आकार, आयतन, घन के रूप में; गुण की पहचान सम, विषम, मध्यस्थ शक्ति के रूप में; स्वभाव की पहचान शक्तियों के सदव्यय के रूप में; धर्म की पहचान अस्तित्व, पुष्टि, आशा और आनंद के रूप में

जागृति परावर्तन और प्रत्यावर्तन (समाधान व प्रमाणिकता) का सफल स्वरूप– नित्य शुभ और सफल; इनमें सामरस्यता रूप और गुण की सीमा में सफल नहीं; रूप, गुण, स्वभाव, धर्म को जानने, मानने के अनंतर ही पहचानना, निर्वाह करना सफल

क्षमता, योग्यता, पात्रता को संप्रेषित और अभिव्यक्त करना= प्रकाशमानता= प्रतिबिम्ब–अनुबिम्बन प्रक्रिया, प्रणाली

मानव सह–अस्तित्व(सामाजिकता, मानवीयता को चरितार्थ रूप देना) को प्रकाशित करना ही वादत्रय की सूत्र और व्याख्या का स्वरूप

इसका नित्य स्रोत मध्यस्थ सत्ता, मध्यस्थ क्रिया, मध्यस्थ जीवन की महिमा, जो स्वयं मध्यस्थ दर्शन का स्वरूप; इससे ही अभ्युदय के अध्ययन, व्यवहार और अनुभव सुलभ होने का संपूर्ण तथ्य प्रस्तुत

अध्याय 5

अस्तित्व में परमाणु का विकास

अस्तित्व से अधिक एवं कम सभी कल्पनाएँ भ्रम

भ्रम=सत्य का प्रतीत होते हुए सत्य न होना

अस्तित्व में अस्तित्व ही अनुभव, विचार, व्यवहार और कार्य का आधार

अरूपतामक अस्तित्व= सत्ता= साम्य, परम, निरपेक्ष ऊर्जा= व्यापक, स्थितिपूर्ण– गति, तरंग विहीन स्थिति

परमाणु/इकाई में ऊर्जामयता का साक्ष्य क्रियाशीलता

इकाई+ऊर्जा संपन्नता= क्रियाशीलता (श्रम, गति, परिणाम)= सम, विषम(कार्यऊर्जा) और मध्यस्थ शक्तियाँ(छिपी हुई ऊर्जा)

स्वभाव गति प्रतिष्ठा ही इकाई की संपूर्णता और निरंतरता

अपरिणामिता की स्थिति तक द्रुत, शीघ्र और दीर्ध परिणामी परमाणु

परमाणु, व्यवस्था की सबसे छोटी इकाई= मात्रा, बल, शक्ति का अविभाज्य वर्तमान

अणु– स्वजातीय, विजातीय; विजातीय परमाणु के योग से रासायनिक अणु

रचना की मात्रा अस्थिर; अतः रचनाएँ भौतिक और रासायनिक सीमावर्ती

मात्रा में स्थिरता होना ही विकास, रचनाएँ विकास क्रम में

वातावरण= इकाई पर प्रभावित दवाब , नैसर्गिकता=जिस विधि से दवाब पड़ा हो

रासायनिक गठन, वातावरण और नैसर्गिकता के योगफल में सप्राण व निष्प्राण कोशिकाएँ

स्तुषि में संपूर्ण रचनाएँ का स्वरूप नियम व संगतिबद्ध– पूर्व रचनाक्रम के अनुकरण की क्षमता, योग–संयोग पूर्वक अंकुरण में प्रवृत्ति

त्व= मौलिकता= स्वभाव

वंशानुषंगीयता पूर्वक जीवावस्था त्व सहित व्यवस्था; मानव मानवत्व के विपरीत प्रकाशित

पदार्थावस्था की अपेक्षा में प्राणावस्था की जाति, प्रजाति कम व स्थिरता, निश्चयता का घटना; जीवावस्था में प्राणावस्था की अपेक्षा कम विविधता व नैसर्गिकता और वातावरण के दवाब वश वंशानुषंगी आचरण में परिवर्तन(स्थिरता, निश्चयता का घटना); ज्ञानवस्था में वैविध्यता नगण्य व वंशानुषंगीय अस्थिरता चरम

विकासक्रम मे ही पदों की गणना

गठनपूर्ण परमाणु द्वारा एक पुंजाकार गति पथ की स्थापना; अक्षय श्रम और गति; क्रिया का उपयोग सन्निकर्ष व नियोजन के रूप में करने से और श्रेष्ठ, और प्रखर

चैतन्य इकाई में 5 बल, 5 शक्तियाँ 10 क्रियाओं के रूप में प्रभावशील; आत्मबल(अनुभव का वैभव) की शक्तियाँ प्रामाणिकता व समाधान के रूप में; पहचान, निर्वाह ही प्रामाणिकता, यही अनुभूति की अभिव्यक्ति

रासायनिक जल, ऊष्मा का दवाब एवं नैसर्गिकता के प्रभाव के योगफल में निष्प्राण (निश्चित रासायनिक अणु) कोशिकाएँ (पदार्थावस्था) में स्पंदनशीलता शुरू=सप्राण कोशिकाएँ(प्राणावस्था)

कोशिका संपूर्ण रचना का प्रतिरूप; अपने–अपने स्थान पर रहकर निश्चित भागीदारी; स्पंदन(संकुचण, प्रसारण)पूर्वक तरंग व दवाब का कार्य करते हुए एक–दूसरे के साथ जुड़े रहने की व्यवस्था; संकुचणवश दवाब और प्रसारण वश तरंग; फलतः प्राणावस्था विद्युतग्राही

पदार्थावस्था में बाह्य दवाब कि बिना संकुचण व प्रसारण सिद्ध नहीं, प्राणावस्था में यह स्वभाव

मात्रा= इकाई= रूप, गुण, स्वभाव, धर्म की अविभाज्य वर्तमान; मात्रा की अस्थिरता परमाणु के पूर्व और पर रूप में अधिक; अंशों के रूप में पदार्थ की स्थिति नगण्य

परमाणु में ही पाँचों बल व शक्ति सुलभ; अणु, अणु रचना में मध्यस्थ बल नहीं

जड़– विद्युत–चुम्बकीय, गुरूत्वाकर्षण, सामान्य(क्षीण)हस्तक्षेप, सबल हस्तक्षेप, मध्यस्थ बल

चैतन्य– मन–आशा, वृत्ति–विचार, चित्त–इच्छा, बुद्धि–संकल्प, आत्मा–अनुभूति

प्रत्येक परमाणु में रूप, गुण, स्वभाव, धर्म वर्तने के कारण ही उनमें ऊर्जा का परिचय; ऊर्जा जब कार्य ऊर्जा के रूप में होती है, तभी बलों का परिचय

परमाणु में निहित बल का परिचय उसकी अपनी ही स्थिति में, उसी के अंतर्गत होनेवाली क्रिया की ही अभिव्यक्ति है।

मात्रात्मक परिवर्तन= अंशों की संख्या में परिवर्तन; परमाणु में मात्रात्मक परिवर्तन से गुणात्मक परिवर्तन

मूल मात्रा= परमाणु

परमाणु में– आकार, आयतन, घन के अर्थ में रूप; सम, विषम, मध्यस्थ के अर्थ में गुण(शक्तियाँ); उद्भव, विभव, प्रलय के अर्थ में स्वभाव(मौलिकता); अस्तित्व(पुष्टि, आशा) और अनुभूति (आनंद) के अर्थ में धर्म

रूप और गुण, गणित के द्वारा समझ में आते हैं; स्वभाव और धर्म गुण और कारण समझ में आते हैं; गणित आँखों से अधिक और समझ से कम; गुण घटनाओं के रूप में परस्पर वर्तमान; स्वभाव/मूल्य प्रत्येक इकाई में स्थिर, धर्म अविभाज्य

व्यवस्था की समझ= सुख= समाधान= गुणात्मक भाषा

व्यवस्था के कारक तत्व समझ= घटना का अवयव= नियतिक्रम= समाधान का कारण= कारणात्मक भाषा

संपूर्ण प्रकृति स्थिति में स्वभाव गति प्रतिष्ठा, जो मध्यस्थ क्रिया/आत्मा के अनुशासन में होने वाली क्रिया

अनुभव और प्रामाणिकता को सर्वसुलभ, सहज सुलभ बना लेना ही पुरूषार्थ का तात्पर्य

शिक्षा/प्रबोधन पूर्वक प्रामाणिकता ही आदान–प्रदान करने की वस्तु

बोध= हृदयंगम= अवधारणा

मात्रा, भौतिक, रसायन, मन, व्यवस्था, व्यवहार विज्ञान के मूल में प्रामाणिकता व समाधान ही अक्षय स्रोत, त्राण, प्राण

शिक्षा–संस्कार ही बोध व अवधारणा का एकमात्र स्रोत

स्वनियंत्रण के अर्थ में मध्यस्थ शक्ति क्रियाशील; चैतन्य प्रकृति में नियंत्रण समाधान और उसकी निरंतरता के अर्थ में

बौद्धिक, भौतिक और आध्यात्मिकता अविभाज्य वर्तमान

सत्ता में संपृक्त प्रकृति का सत्ता में अनुभूत होने पर्यंत विकास के लिए बाध्य होना अस्तित्व सिद्ध सत्य; अस्तित्व, लक्ष्य और विकास के संबंध में निर्भ्रम हो जाना ही विवेक और विज्ञान का प्रयोजन

मानव में भ्रम का कारण – शरीर को जीवन समझना

शरीर के लिए आहार, निद्रा, भय, मैथुन का प्रयोजन; जबकि जीवन के लिए मूल्य और मूल्यांकन ही व्यावहारिक प्रयोजन

जीवन नित्य; शरीर जीवन के लिए साधन, माध्यम

अस्तित्व स्थिर होने के कारण जड़ परमाणु ही विकसित होकर चैतन्य पद में संक्रमित

पंचमानव के स्वभाव, विषय, दृष्टि और प्रमाण; प्रकृति के चारों अवस्था का स्वभाव, धर्म, अनुषंगी(प्रवृत्ति), रूप, क्रिया का विवरण; अस्तित्व= सह–अस्तित्व का विवरण

अध्याय 6

सह–अस्तित्व, पूरकता और व्यवस्था

युद्ध– सह–अस्तित्व; शोषण– पूरकता; अव्यवस्था– व्यवस्था; संग्रह– समृद्धि

भौतिक वस्तुएँ– ठोस व विरल; रासायनिक वस्तुएँ– ठोस, तरल व विरल

सत्ता में संपृक्ततावश हर परमाणु बल संपन्न, ऊर्जा संपन्न

जीवावस्था और स्वेदज संसार में भी ध्वनियों के आधार पर कार्यकलाप को पहचानना; मानव भी समझदारी को व्यक्त करने के लिए भाषा का प्रयोग

मानवत्व/सार्वभौम व्यवस्था के आधार पर ही मानव की एक इकाई/जाति के रूप में पहचाान

भाषा किसी वस्तु, कार्य, देश, काल, प्रक्रिया, परिणाम, स्थिति, गति को निर्देशित व इंगित करने हेतु

संपूर्ण अस्तित्व ही व्यक्त; अस्तित्व ही परम सत्य, निरंतर सामरस्य एवं समाधान

वस्तुएँ सत्ता में संपृक्त; परस्परता में एक दूसरे के बीच शून्य/सत्ता ही है।

भ्रमः– विखण्डनपूर्वक पदार्थ के अस्तित्व को नकार देना; जबकि– जो था वही होता है; और जो था नहीं, वह होता नहीं; अस्तित्व सहज नित्य वर्तमान रूपी सहज वैभव में देश और काल हस्तक्षेप नहीं कर पाते

भ्रमित मानस– अस्तित्व में कोई निषेध नहीं, निषेध भ्रमित मानस कल्पना, इच्छा का प्रकाशन है।

मानव की मौलिकता– कर्मस्वतंत्रता, कल्पनाशीलता; कर्म करते समय स्वतंत्र और फल भोगते समय परतंत्र; मनाकार को साकार करनेवाला और मनःस्वस्थता का आशावादी

इन मौलिकताओं के कारण मानव ही द्रष्टा;

भ्रम का कारण– समुदाय परंपराएँ, नैसर्गिकता(धरती, पानी, हवा, हरियाली), वातावरण (व्यापक में स्थित अनंत इकाइयाँ); शिक्षा–संस्कार ही भ्रम का प्रधान कारण

परंपरा जागृति हेतु ही विकल्पात्मक दर्शन, वाद, शास्त्र– अस्तित्व सहज अध्ययन हेतु

वर्तमान विवशता से निकलने हेतु समाधान विधि; पूरकता विधि से समाधान

हर अवस्था का अपना–अपना उपयोग, सदुपयोग, प्रयोजन अस्तित्व सहज विधि से ही अनुबंधित; संबंधों को पहचानने के आधार पर मूल्यों का निर्वाह, अतः पूरकता प्रमाणित

शेष प्रकृति परस्पर पूरक और मानव के लिए भी पूरक

भ्रमवश मानव द्वारा इनका शोषण; फलस्वरूप– प्रदूषण, वातावरण असंतुलन, पानी का सतह बढ़ना,वन संपदा उजड़ना, ऋतु असंतुलन, जनसंख्या वृद्धि

विकसित देश– सर्वाधिक समरशक्ति संपन्न; सर्वाधिक भोग, संग्रह; विश्व व्यापार में एकाधिकार का प्रयास; तकनीकी व विद्वता का भी व्यापार; युद्ध और व्यापार ही आदर्श

युद्ध, शोषण, उन्मादत्रय सर्वथा असामाजिक शंकाकारक, पीड़ाकारक

उन्मादत्रय का मूल–आवेश– सम्मोहनात्मक(काम,लोभ,मोह), विरोधात्मक(क्रोध,मद,मत्सर)

भ्रम=अतिव्याप्ति, अनाव्याप्ति, अव्याप्ति दोष; बंधन= आशा, विचार, इच्छा में भ्रम होना

विकास परमाणु में होनेवाली प्रक्रिया

भ्रमित परंपरा उन्मादत्रय संपन्न शास्त्र पूर्वक उनमें सहयोगी; छूटने हेतु विकल्पात्मक वादत्रय

प्रकृति में आवर्तनशीलता को व्यवस्था के अर्थ में समझने के उपरांत ही आवर्तनशील अर्थचिंतन

अध्ययन= अस्तित्व सहज यथास्थिति/प्राकृतिक विधियों को यथावत समझना; ह्रास विधि से नहीं

अस्तित्व– विकसित जीवन चैतन्य पद– बंधन त्रय पूर्वक पीड़ित– सर्वतोमुखी समाधान पूर्वक जागृति– प्रामाणिकता, स्वानुशासन= परम जागृति

मानव जागृत होकर ही सुखी, समृद्ध, समाधानित और सुंदर; साक्ष्यः– अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था=मानवीय परंपरा; परंपरा प्रचार और शिक्षा के रूप में सर्वाधिक प्रभावशील

प्रत्येक व्यक्ति में शुभ की चाहना, पर भ्रमवश विचारशैली और जीने की कला में मतभेद= अंतर्विरोध, अपेक्षा के खिलाफ बाह्य विरोध

समाधान और व्यवस्था अविभाज्य

परंपरा में जागृति= शिक्षा–संस्कार–व्यवस्था–संविधान में जागृत मानव का लक्ष्य, स्वरूप, कार्य और प्रयोजन स्पष्ट हो जाना

संस्कार= स्वीकृति, अवधारणा;

अवधारणा, जागृति और जागृतिपूर्णता हेतु वस्तु= ज्ञानत्रय

शिक्षा की मूल वस्तु =ज्ञानत्रय में इंगित वस्तु की उपयोगिता, सदुपयोगिता, प्रयोजनशील होने की विधि

मानव अस्तित्व में अविभाज्य; जागृतिपूर्वक जानता, मानता, पहचानता, निर्वाह करता हुआ प्रमाणित

सार्वभौम व्यवस्था को पाने के क्रम में रासायनिक, भौतिक क्रियाकलापों का विधिवत अध्ययन

रासायनिक रचनाएँ चैतन्य प्रकृति के लिए पूरक और विरचनाएँ जड़ प्रकृति के लिए पूरक

व्यवस्था और विकास को पहचानने का आधार परमाणु

रचना की संपूर्ण मौलिकता आधारभूत वस्तु के समान

जागृतिपूण मानव परंपरा में ही परिवारमूलक स्वराज्य व्यवस्था सर्वसुलभ

परंपरा जागृति हेतु परिवर्तन की बेला में सच्चाई के आधार पर, गहराई के साथ व्यवहार में, प्रमाणों को प्रमाणित करने की निष्ठा कम से कम एक व्यक्ति में– गहराई, गंभीरता और व्यवहार प्रमाण का संयोग

परंपरा में ऐसी दो स्थली थी संभावना के रूप में– आदर्शवाद में, भौतिकवाद में– पर दोनों ने व्यवहार प्रमाण को नहीं स्वीकारा

मानवीयता/मानवत्व को व्यवहार में प्रमाणित करना = जीवन ज्ञान में पारंगत, अस्तित्व दर्शन में निर्भ्रम रहेंगे; स्वयं में विश्वास, श्रेष्ठता का सम्मान, चरित्र, नैतिकता और मूल्य का निर्वाह, मूल्यांकन करेंगे

हर इकाई अपने त्व सहित व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदार– यही सह–अस्तित्व सहज अभिव्यक्ति; समग्र व्यवस्था में भागीदारी = पहचानना, निर्वाह करना

चारों अवस्था सहज रचनाएँ उसका प्रयोजन और कार्य सह–अस्तित्व में स्वीकृत; फल– पूरकता के रूप में

परंपरा में जिन आयामों में रिक्तता है, उसकी भरपाई(की जिम्मेदारी) का दायित्व प्रबुद्ध मनुष्यों का; इसमें सर्वप्रथम आयाम– व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदारी; जागृतिपूर्वक ही इसकी भरपाई संभव

जीवन सहज सभी 10 क्रियाओं का निरीक्षण, परीक्षण पूर्वक अध्ययन संभव; इनका व्यवहार में प्रमाणित होना ही तृप्ति, समाधान, व्यवस्था

जीवन एक अविभाज्य इकाई; इकाई के अध्ययन का आधार उनका निश्चित आचरण

अभी विखण्डन, दवाब, प्रभाव पूर्वक आवेशित करके अध्ययन; जबकि स्वभाव गति में ही व्यवस्था का ठीक–ठीक अध्ययन

सभी घटनाओं के पहचानने और पुनः घटित कराने में मानव की कल्पनाशीलता व कर्मस्वतंत्रता समाहित

यदि अनुसंधानित वस्तु को अध्ययन कर मूल व्यक्ति से सदृश नहीं हुआ जा सकता – तो यह स्वयं के प्रति विश्वासघात का आधार

गलती को कितनी भी बार दुहराएँ, सही समझ में नहीं आता; जबकि हर मानव सही का ही पक्षधर है; सही और गलत की सीमा रेखा जागृत मनुष्य को समझ में आता है।

जागृत व्यक्ति = ज्ञानत्रय संपन्न, वर्तमान मे मानवीय आचरण में प्रमाणित

जीवन ज्ञान + मानवीयतापूर्ण आचरण ज्ञान से मानवीयता (संपूर्ण आचरण) प्रमाणित; अस्तित्व दर्शन से वर्तमान में विद्वता प्रमाणित

अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था ही विद्वतापूर्ण मानवत्व का वैभव, स्वानुशासन ही जागृतिपूर्णता का प्रमाण; स्वभाव में 6 मूल्य स्थापित

संबंधों की पहचान मानव सहज, मूल्यों का निर्वाह करना जीवन सहज

संबंधी की पहचान, मूल्यों का निर्वाह, मूल्यांकन= न्याय; आधार– विश्वास= वर्तमान में निष्ठा

व्यवस्था= वर्तमान में वैभवित, परंपरा के रूप में अक्षुण्णता

वर्तमान में मानवत्व की पहचान नहीं; इसे अखण्ड समाज का आधार नहीं माना गया; इसे व्यवस्था का रूप नहीं दिया गया

फलस्वरूप परंपरा के चारों स्तंभ में मानवीयता का अभाव; मानवीयता और विद्वता ही परंपरा के चारों स्तंभ का आधार

मानवीयता= जीवन ज्ञान सहित मानवीयतापूर्ण आचरण; विद्वता = अस्तित्व दर्शन

द्रष्टा पद का प्रयोग बोध और अनुभव के रूप में

द्रष्टा, दृश्य, दर्शन की अस्तित्व में अविभाज्यता

मनुष्य क्रमशः कल्पना, विचार, इच्छा, बोध, अनुभव के आधार पर सत्य को समझता है।

राक्षस मानव क्रूरता एवं पशु मानव दीनता प्रधान

समाधानात्मक भौतिकवाद में निर्णायक विधियों को पाने हेतु विवेक और विज्ञान सम्मत तर्क प्रणाली

विवेक= जीवन ज्ञान संपन्नता(अमरत्व), शरीर का नश्वरत्व और व्यवहार के नियम (नियमत्रय)

प्राकृतिक नियम के चार सूत्र– पूरकता, उदात्तीकरण, विकास, त्व सहित व्यवस्था= सह–अस्तित्व

नैसर्गिक प्रकृति के साथ पूरकता का निर्वाह करना ही प्राकृतिक नियम; प्रक्रिया =संतुलन(ऋतु), संरक्षण, मूल्यांकन(उपयोगिता के आधार पर)

उदात्तीकरणः– दो या दो से अधिक वास्तविकताएँ मिलकर अपने–अपने आचरण को त्यागकर नये आचरण को अभिव्यक्त करना

उदात्तीकरण की प्रक्रिया/रस–रसायन का निर्माण अनुपाती विधि से पूरकता के अर्थ में; अनुपाती विधि से ही परमाणुओं के प्रजाति की संख्या, मात्रा व रस–रसायन की विविधता, मात्रा का निश्चयन

धरती का 'संरक्षण विलय' इस धरती का वातावरण; यही इस धरती का प्रभाव क्षेत्र भी

प्रत्येक एक अपने वातावरण सहित संपूर्ण; सपूर्णता= पूर्णता त्रय के अर्थ में भागीदारी

भौतिक वस्तुओं के समृद्ध होने के उपरांत रासायनिक क्रियाकलापों में तत्परता; रासायनिक वस्तु ठोस रचनाक्रम में कोषाओं की रचना और प्राणसूत्र का स्वरूप रचना; इस बिंदु से उस धरती पर रासायनिक वैभव का इतिहास प्रारंभ; अस्तित्व में ये सभी क्रियाएँ शाश्वत रूप में वर्तमान

व्यवस्था की अपेक्षा में ही अव्यवस्था की समझ और पीड़ा प्रक्रियाबद्ध

वाद–विवाद के मूल में कम से कम एक पक्ष का गलत रहना आवश्यक; गलती का मूल रूप भ्रम; भ्रम= अधिमूल्यन, अवमूल्यन, अमूल्यन; भ्रमित मानव ही अव्यवस्था के रूप में प्रकाशित; जिसके पास जो रहता है, उसका वह बंटन करता है।

अव्यवस्था 6 उन्माद के रूप में; सम्मोहनात्मक(लाभ, काम, भोग), विरोधात्मक(द्रोह, विद्रोह, युद्ध)

उन्माद की तुलना में आस्था (भक्ति–विरक्ति) राहत सी प्रतीत होती है; किन्तु परंपरा (के चारों स्तंभ) में इनका सार्वभौम होना संभव नहीं

विज्ञान शिक्षा सार्वभौम, किन्तु व्यवहार में प्रमाणित नहीं; यंत्र ही प्रमाण का आधार

(सह–अस्तित्व सहज) व्यवस्था को अध्ययनगम्य कराना ही सह–अस्तित्ववाद(वादत्रय) का उद्देश्य; दर्शन, वाद, शास्त्र को शिक्षा में अपनाने से शिक्षा का मानवीयकरण

इस अनुसंधान का मूल कारण– अव्यवस्था (की समझ) में जो पीड़ा थी उसे दूर करना

आज के अधिकांश मनुष्य सुविधा, संग्रह, व्यसन में लिप्त; कुछ अलिप्त भी रहते हैं। व्यसन व्यापार सर्वाधिक लाभोन्मादी

1. धरती पर उपलब्ध वस्तुओं से हर व्यक्ति, परिवार को उसकी कल्पनानुसार सुविधा मिलना संभव नहीं
2. सुविधा, संग्रह, भोग व्यवस्था का सूत्र, व्याख्या व प्रयोजन का आधार नहीं

अभी युद्ध के लिए भोग से भी अधिक सामग्री का प्रयोग

नैसर्गिकता का संतुलन धरती पर ऋतुमान के रूप में; अतः इसे ध्यान में रखते हुए जीने की कला (विचार शैली, अनुभव बल) विकसित करना आवश्यक

सह–अस्तित्ववादी विचारों के आधार पर मानव इसे वर्तमान में प्रमाणित कर सकता है; फलस्वरूप सर्वशुभ प्रमाणित

अध्याय 7

संचेतना, चेतना और चैतन्य

जीवन की अंतिम अभिलाषा—जागृति, मानव की अंतिम अभिलाषा— सर्वतोमुखी समाधान, प्रामाणिकता; परम त्रय ही जागृति और उसके वैभव का स्वरूप

मानवत्व= मानव में, से, के लिए व्यवस्था सूत्र; मानवत्व ही मानव का त्राण और प्राण

परमत्रय के आधार पर (व्यवहार में सामाजिक एवं व्यवसाय में स्वावलंबी+4) स्वायत्त मानव प्रमाणित

परम त्रय विधि से जागृति; जागृति और प्रामाणिकता पूर्वक ही स्वयं व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदारी

अस्तित्व व्यापक में संपृक्त प्रकृति(4 अवस्था) के रूप में सह—अस्तित्व पूर्वक संपूर्ण; कम या अधिक की आवश्यकता नहीं

चेतना में संचेतना, चैतन्य और भौतिक रासायनिक वस्तुएँ अविभाज्य वर्तमान(डूबी, भींगी, घिरी)

सत्ता= चेतना, व्यापक, ब्रह्म— पारदर्शी, पारगामी, नित्य वर्तमान, नित्य व्यक्त

भींगा होना= पारगामी होना= इकाई ऊर्जा संपन्न, बल संपन्न

द्रष्टा पद में होने के फलस्वरूप, मानव ही गिनने व मापने का कार्य आवश्यकतानुसार

इकाई अनंत; अतः आवश्यकता से अधिक संभावना

जीवन चैतन्य पद का वैभव; संचेतना, जीवन सहज अभिव्यक्ति= पूर्णता के अर्थ में जानना, मानना, पहचानना, निर्वाह करना

परार्थ और परमार्थिक विधि से क्रियापूर्णता और आचरणपूर्णता पूर्वक जागृतिपूर्णता को प्रमाणित करना जागृत मानव परंपरा में आवश्यक, सहज

अध्याय 8

समाज, धर्म(व्यवस्था) और राज्य

धर्म :– आदर्शवाद में धर्म का आधार– पावन ग्रंथ

ईश्वर कृपा, मोक्ष, कल्याणसंबंधी आश्वासन के आधार पर आस्था निर्मित

विविध संप्रदाय में पुण्यार्जन के तरीकों में विविधता ही अपने–पराये की दीवाल का कच्चा माल; पुण्यशीलों का उद्धार एवं दुष्टों का विनाश ही ईश्वर का प्रमुख कार्य; रूढ़ियाँ तर्कसंगत ना होने के कारण अंतर्विरोध एवं बाह्य विरोध का कारण

रूढ़ियों के परिवर्तित होने की स्थली– रूढ़ियों के अनुसार जीने वाले का स्वयं में अंतर्विरोध होने पर; समुदाय में अंतर्विरोध होने पर; स्वत्व की प्रतिबद्धता में अंतर्विरोध होने पर; अधिकार के प्रति किसी की अंतर्विरोध होने पर

राज्य परिवर्तनः– सत्ता परिवर्तन, हस्तांतरण, विकेन्द्रीकरण– विश्वासघात, दंभ, पाखंड, वंशानुगत, स्वप्रसन्नतापूर्वक

धर्म/रूढ़ि परिवर्तन– तर्कसंगत होने के क्रम में निरर्थकता की स्पष्टता; बाह्य विरोध होने पर रूढ़ियाँ और दृढ़, मजबूत

शक्ति केंद्रित शासन– लिखित/मौखिक संविधान का पालन, पालन ना होने की स्थिति में बल प्रयोग का अधिकार सत्ता/पद धारियों के पास

विकेंद्रीकृत शासन– एक की जगह अनेक लोगों द्वारा मिलकर इसी काम को करना

गणतांत्रिक शासन– लोकमानस का ख्याल रखा जाता है ऐसा प्रचार

मुद्रा :– प्रतीक प्राप्ति नहीं होती और प्राप्तियाँ, प्रतीक नहीं होती

भय, प्रलोभनपूर्वक गरीब एवं अमीर देश के बीच की खाई का बढते जाना– आर्थिक असमानता

संस्कृति में असमानता की संवैधानिक स्वीकृति

वस्तुतः समाज, राज्य और धर्म की अविभाज्यता; मानव धर्म का मूल रूप= परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था; फलन– समाधान, समृद्धि, अभय, सह–अस्तित्व

मिलन= योग; पूर्णता के अर्थ में सार्थक मिलन= संयोग

योग, संयोग के आधार पर मानवीय आचरण और उसकी सार्वभौमता का स्वरूप स्पष्ट

सार्वभौम व्यवस्था में मानव की भागीदारी ही सार्वभौम मानवीय आचरण

मानव = मनाकार को साकार करने वाला +मनःस्वस्थता का आशावादी

न्याय, धर्म, सत्य सहज दृष्टि पूर्वक ही मनःस्वस्थता प्रमाणित

मानवत्व ही धर्म और राज्य का आधार

न्यायपूर्वक सुख, शांति, व्यवस्थापूर्वक शांति, संतोष तथा अनुभव पूर्वक संतोष और आनंद जीवन में प्रमाणित

स्वराज्य= स्व/जीवन का वैभव; जीवन वैभव= जागृति (सर्वतोमुखी समाधान एवं प्रामाणिकता) की अभिव्यक्ति; इसका व्यवहार रूप= समृद्धि, अभय, सह–अस्तित्व–परिवार से विश्व परिवार व्यवस्था तक प्रमाणित; इसके क्रियान्वयन क्रम में आयाम त्रय सर्वमानव हेतु सुलभ एवं अक्षुण्णता हेतु आयाम द्वय

परिवारमूलक स्वराज्य व्यवस्था= दस सोपान, 5 समिति– 5 आयाम के कार्यसंचालन हेतु; 10 में एक व्यक्ति परिवार में समृद्ध रहते हुए व्यवस्था कार्य हेतु अर्पित

व्यवस्था का आधार परिवार; परिवार का आधार– स्वायत्त मानव; स्वायत्त मानव का आधार– समझदारी= ज्ञानत्रय

अध्याय 9

1.मौलिकता की पहचान ही निर्वाह का आधार

अस्तित्व ही संपूर्ण वस्तु का मूल धर्म;

अस्तित्व= सत्ता में  संपृक्त प्रकृति(4 अवस्था)

मौलिकता= मूल्य

चारों अवस्थाओं का अपना–अपना स्वभाव, धर्म

संपूर्ण पहचान मौलिकता एवं मूल्यांकन ही है।

पदार्थ अवस्था में गठन/संगठन के आधार पर ही मौलिकता प्रमाणित; परंपरा व मात्रा परिणाम के आधार पर (परमाणु में समाहित अंशों की संख्या)

प्राण अवस्था में रचना विधि के आधार पर सारक–मारक स्वभाव; अधिकतर मनुष्य व जीव शरीर के पोषण, संरक्षण के लिए अनुकूल तत्व

जीव अवस्था क्रूर–अक्रूर के रूप में स्वभाव – वंशानुषंगीयतापूर्वक जीव संसार नियंत्रित, फलतः कर्म करने में परतंत्र; पर पीड़ा – आहार विधि, भयभीत विधि

प्रत्येक धरती पर चारो अवस्था प्रमाणित होने के क्रम में विकास नित्य प्रभावी

मानव कर्म करते समय स्वतंत्र, फलस्वरूप स्वयंस्फूर्त विधि से नियंत्रित/व्यवस्थित होने की आवश्यकता एवं संभावना

शरीर को जीवन मानने के आधार पर कर्म स्वतंत्रता व कल्पनाशीलता का दुरूपयोग

मनव–मानव में अविश्वास और भ्रम आदिकाल से यथावत

प्रत्येक समुदाय में आदर्श व्यक्तियों की कमी नहीं, पर आदर्श परंपरा का अभाव

मानव ही अस्तित्व में अविभाज्य और द्रष्टा

मानव सहज मौलिक तर्क= प्रयोजन (विवेक) सम्मत विश्लेषण(विज्ञान) एवं विश्लेषण सम्मत प्रयोजन

मानव सहज मौलिकता = मानवीयता; मानवीयता ही मानव का स्वभाव व जागृतिपूर्वक व्यक्त

मानव जीवन एवं शरीर के संयुक्त रूप में

अजागृत मानव स्वभाव – हीनता(छल, कपट, दंभ, पाखंड), दीनता, क्रूरता(पर–धन, पर–नारी/पुरूष, पर–पीड़ा)

मानवीय स्वभाव= धीरता, वीरता, उदारता– जागृत मानव

अति मानवीय स्वभाव= दया, कृपा, करूणा– जागृतिपूर्ण मानव

धीरता= न्याय के प्रति निष्ठा, दृढ़ता और विश्वास

न्याय= संबंधों की पहचान, मूल्यों का निर्वाह

परस्परता में संबंध को पहचानना= जागृति; परस्परता में संबंध का निर्वाह करना= निष्ठा; परस्परता में संबंध का मूल्यांकन करना= व्यवस्था सहज गति

वीरता– धीरतापूर्वक दूसरों को न्याय सुलभ कराने में, अपने तन, मन, धन का नियोजन

उदारता – अविकसित के विकास में, संबंध को निर्वाह करने में, श्रेष्ठता का सम्मान करने में उपयोगिता, सदुपयोगिता विधि से तन, मन, धन रूपी अर्थ की सदुपयोग, सुरक्षा

ऐसी मौलिकता के लोकव्यापीकरण हेतु परंपरा के सभी आयाम में मानवीयता का समावेश आवश्यक

मोक्ष= भ्रम मुक्ति= पूर्ण जागृति= अस्तित्व में अनुभव और उसकी निरंतरता सहज स्थिति= जागृतिपूर्ण संचेतना= संबंधों की पहचान के साथ ही दया, कृपा, करूणा के रूप में मौलिकताएँ व्यक्त

दया– पात्रतानुकूल वस्तुओं को सुलभ करा देना

कृपा– वस्तु, प्राप्तियाँ हैं, उनमें पात्रता को स्थापित करा देना

= तन, मन, धन का उपयोग, सदुपयोग विधि संपन्नता

करूणा= पात्रता, वस्तु, उपलब्धियों को सुलभ करा देना

समाधानमूलक विधि से अखण्ड समाज; व्यवस्थामूलक विधि से सार्वभौम व्यवस्था

व्यक्तित्व= आहार, विहार, व्यवहार= मानवीय आचरण+व्यवस्था में भागीदारी(आयाम त्रय में)

जागृतिपूर्ण परंपरा=संस्कृति, सभ्यता, विधि, व्यवस्था में सामरस्यता

आचरण, शिक्षा, संविधान, व्यवस्था में सामरस्यता

आयामत्रय सुलभता प्रत्येक परिवार हेतु

सर्वशुभ (समाधान, समृद्धि, अभय, सहअस्तित्व) सर्वसुलभ

मानव आहार= शाकाहार– पौष्टिक, सुपाच्य, स्वादिष्ट; उपलब्धि= मजबूत शरीर; भ्रमवश भोग व संघर्ष हेतु इनका प्रयोग

द्रोह–विद्रोह–छल, कपट, दंभ, पाखंड की पीड़ा से राहत पाने हेतु– यौन व्यसन, सुरापान; फलस्वरूप असामनता, समस्या, अव्यवस्था

भ्रम एवं बेहोशी अव्यवस्था के कारक; ज्ञानत्रय की रोशनी में सभी अव्यवस्थाएँ अनावश्यक

मानवीयतापूण संस्कृति में एकता अथवा अखण्ड समाज के चार सूत्र

राज्य नीति– मन (ज्ञान,दर्शन), तन, धन रूपी अर्थ की सुरक्षा– परिवारमूलक स्वराज्य व्यवस्था में

धर्म नीति– मन (ज्ञान,दर्शन), तन, धन रूपी अर्थ का सदुपयोग; सदुपयोग पूर्वक ही मानव सुखी

जीवन सहज जागृति, समाज सहज अभिव्यक्ति, व्यवस्था सहज भागीदारी एवं व्यवहार सहज उपलब्धि; उपलब्धि=सर्वशुभ

बेहोशी, उन्माद में मनुष्य स्वभाव गति में नहीं, आवेशित गति में– मन और शरीर से कमजोर; मानवीयता के खोल में ही अमानवीयता पनपता हुआ दिखना; अमानवीयता किसी को स्वीकृत नहीं

सभी उन्माद निरर्थक; मानवीयता सर्वमानव स्वीकृत, मजबूरीवश अमानवीयतापूर्वक जीना

राजनेता और धर्मनेता का भी ऐसा ही मत

2. मानवीय आहार

मानवीयतापूर्ण विधि से जीने की कला में आहार एक महत्वपूर्ण बिंदु

मानव द्रष्टापद पूर्वक मानवेतर प्रकृति का पोषक, अन्यथा शोषक

मानव की शरीर रचना में आँत, नाखून, दाँत की बनावट शाकाहारी जीवों के रूप में; मांसाहार, मद्यपान में व्यस्त होकर स्वयं संतुलित रहना संभव नहीं; व्यवस्था के रूप में जीने हेतु भी शाकाहार एक मात्र शरण

प्राणावस्था का विहित विधि से नियोजन(विनियोजन)=पदार्थ अवस्था व प्राण अवस्था के लिए पूरक होना

जीव और ज्ञान अवस्था में शरीर रचना का विनियोजन जीवन के लिए पूरकता हेतु

बल के आधार पर मांसाहार ज्ञानावस्था में व्यवस्था का आधार नहीं, तकनीकी बल, शरीर बल से काफी अधिक

जीवंतता सहित ही जीव शरीर और मनुष्य शरीर का संचालन जीवन से हो पाता है।

शरीर में विविध तंत्र और सप्त धातु, समृद्ध मेधस

ज्ञानत्रय पूर्वक ही मानव व्यवस्थित

कृत, कारित, अनुमोदित एवं कायिक, वाचिक, मानसिक विधि से 9 प्रकार से कर्म

जीवनोपयोगी शरीर में ही मांस की संप्राप्ति सटीक; रक्त संचार क्रम में ही मांस का संरक्षण; मानव शरीर का मांस सर्वाधिक स्वादिष्ट

संपादन, उत्पादन और विनिमय कार्यों में प्रत्येक व्यक्ति शाकाहार या मांसाहार के साथ सहमत

दुर्बल को सबल द्वारा बल पूर्वक भक्षण कर लेना ही हिंसा

वनस्पति को आहार के रूप में प्रयोग करने के उपरांत भी जीवावस्था और ज्ञानावस्था का अवशेष पदार्थावस्था के लिए पूरक

शाकाहार– दुग्धपान, मांसाहार– मद्यपान

वर्तमान में विश्वासघात रूपी छल, कपट, दंभ, पाखंड पूर्वक शोषण पूर्वक धन, सुविधा संग्रह

संग्रह का कोई तृप्ति बिन्दु नहीं; किन्तु आम आदमी के प्रेरणास्रोत राजनेता, धर्मनेता, उद्योगपति, व्यापारी सभी सुविधा संग्रह में व्यस्त

तृप्ति/प्रयोग वस्तु से/का ही, मुद्रा से नहीं; कृत्रिम अभावपूर्वक मुद्रा (प्रतीक) मूल्य में वृद्धि, जबकि वस्तु मूल्य यथावत

बेहतरीन जिंदगी = अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था में भागीदारी, मानवीयतापूर्ण आचरण; न कि उन्मादत्रय पूर्वक जीना

नशा, सुरा आदि पूर्वक मानव असंतुलित, अव्यवस्था का स्रोत

मद्यः– किसी मीठा वस्तु को सड़ाने के उपरांत आसवन क्रिया से प्राप्त वस्तु; मानवीयतापूर्ण आचरण को व्यक्त करने में बाधक

आसव(औषधि):– किसी भी मीठी वस्तु को इसको अपने में, से, के लिए आसव के लिए बाध्य किये जाने पर उसमें मूल द्रव्य पूर्णतया विकृत होने से बचाने के लिए अनुपाती विधि से मद्य स्वयं से तैयार कर लेता है एवं मूल द्रव्य संरक्षित– औषधीय प्रयोग

दूध – जीवंत शरीर में निष्पन्न ममता सम्मत प्रेरित रस

विविध प्रकार से रस शरीर से बहिर्गत; दूध नहीं निकालने से भी जीव शरीर में कोई मात्रात्मक/गुणात्मक परिवर्तन नहीं

मांसाहार= अण्डज–पिण्डज परंपरा से प्राप्त मांस का भक्षण

मरे पशु को खाने में, भ्रूणविहीन अंडा भक्षण करने में मांसाहार हेतु मौन सहमति

3. मानव की मौलिकता

मनुष्य का बहुआयामी होना वंशानुषंगीयता को नकारने की गवाही; जीव संसार वंशानुषंगीयता पूर्वक नियंत्रित

रचना क्रम में परिवर्तन प्राणसूत्रों में उत्सवपूर्वक स्वयंस्फूर्त परिवर्तन के आधार पर; फलस्वरूप विविध रचनाएँ

विकास क्रमिक, विकास क्रम में भौतिक रासायनिक रचनाएँ, विकासपूर्वक जीवन पद, पुनः शरीर और जीवन का सह–अस्तित्व

वर्तमान में भय, प्रलोभन आश्वासनपूर्वक सिद्ध संतों की पहचान, एवं भीड़ का इकट्ठा होना

मध्यस्थ दर्शन के द्वारा सत्य सर्वसुलभ, अध्ययन गम्य, व्यवहार प्रमाण के रूप में, परंपरा सहज रूप में समीचीन संयोग

सह–अस्तित्व का अनुभव, तदनुरूप विचार शैली एवं जीने की कला– जीवन जागृति का प्रमाण

अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था में भागीदारी– अस्तित्व दर्शन में परिपक्वता की अभिव्यक्ति

मानव परंपरा में इसका फलन– व्यक्तित्व और प्रतिभा के संतुलन क्रम में= समाधान, समृद्धि, अभय, सह–अस्तित्व का प्रमाणित होना

4. धर्म और राज्य में अंतर्संबंध

अभी तक धर्म गद्दी से समुदाय चेतना से मुक्ति व प्रमाण परंपरा का कोई स्वरूप स्पष्ट नहीं; जबकि अधिकांश महापुरूष इसके पक्ष में

राज्य= व्यवस्था= सह–अस्तित्व; प्रकृति त्व सहित व्यवस्था

समझना ही जागृति; समझना, जानने, मानने, पहचानने, निर्वाह करने के रूप में प्रमाणित

वर्तमान में विश्वास= समझदारी सहित दायित्व और कर्तव्य का निर्वाह

भविष्य के प्रति आश्वस्ति= विधिवत योजना और कार्य योजना का होना

समझदारी = परमत्रय में जागृति; समझदारी पूर्वक ही मानव व्यवस्था में प्रमाणित

अस्तित्व और समझदारी में एकरूपता ही व्यवस्था का सूत्र और व्याख्या

समझदारी के बिना कल्पनाशीलता और कर्मस्वतंत्रता के प्रयोगवश समस्या का प्रकाशन

पदार्थ अवस्था के रूप, गुण, स्वभाव, धर्म को जानना, मानना, पहचानना, निर्वाह करना ही पदार्थ अवस्था के प्रति जागृति

इसी प्रकार बाकी अवस्था के प्रति जागृति; इन प्रमाणों के साथ ही मानव का वर्तमान में विश्वास होना प्रमाणित

नाम से नामी का निर्देश हो जाना ही संप्रेषणा की सफलता

मानव मानवत्व सहित व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदारी संपन्न होना ही मानव के सह–अस्तित्व का प्रमाण– यही कल्पनाशीलता और कर्मस्वतंत्रता का तृप्ति बिन्दु

सह–अस्तित्व ही परम सौंदर्य, सुख, समाधान एवं सत्य है

व्यवस्था समाज का वैभव है एवं धर्म समाज का स्वरूप

मानव का मानवत्व सहित व्यवस्था होना समाज है और व्यवस्था में भागीदारी= आयामत्रय में भागीदारी; इसकी निरंतरता हेतु शिक्षा–संस्कार और स्वास्थ्य संयम रूपी स्रोत

हर व्यवहार–कार्य के मूल में विचार– भ्रमित विचार/निर्भ्रम विचार(समाधान)

मनुष्य के चाहने और होने के मध्य में जानना, मानना, पहचानना एक आवश्यकता

सुख और समाधान हर मानव की चाहना

रूचिमूलक कार्यकलाप सार्वभौम नहीं– प्रिय, हित, लाभ के अर्थ में– इन्द्रिय सापेक्ष, शरीर सापेक्ष, वस्तु सापेक्ष

जबकि न्याय, धर्म, सत्य सार्वभौम– हर बच्चे में इसकी चाहना, जागृत/मानव परंपरा में इनकी पूर्ति सहज; सभी परंपराएँ इसमें परिवर्तित होने को इच्छुक/बाध्य

मानव शरीर रचना में वंशों के आधार पर विविधता, पर संस्कारानुषंगी विधि से एकरूपता व्यक्त

हर अवस्थाएँ परस्पर संबंधित (पूर्णता के अर्थ में अनुबंधित)

जानना, मानना, पहचानना ही संस्कार; संस्कारानुषंगीयता ही मानवीय व्यवस्था का आधार

मनुष्य की अभिव्यक्ति जीवन प्रधान; शेष प्रकृति नियम, नियंत्रण, संतुलनपूर्वक (व्यवस्थित व परस्पर पूरक) सह–अस्तित्व को प्रमाणित

जीवन में संस्कारों की स्वीकृति व जागृति प्रमाणित

संस्कार और प्रमाण= जानना, मानना, पहचानना, निर्वाह करना= निर्भ्रम विधि से न्याय, धर्म , सत्य का प्रकाशन

न्याय= संबंध, मूल्य, मूल्यांकन, उभय तृप्ति

मानव संबंध – व्यवहार सूत्र का प्रारूप; नैसर्गिक संबंध – पूरकता सहज सत्यता

उत्पादन संबंध – उपयोगिता सहज संबंध – आवर्तन विधि संपन्न विनिमय प्रक्रिया पूर्वक व्यवहारिक

परिवार रचना के साथ व्यवस्था की अभिव्यक्ति एक अनिवार्य स्थिति

व्यवस्था सहज अभिव्यक्ति= आयामत्रय (न्याय, विनिमय, उत्पादन) प्रधान प्रक्रिया

न्याय– स्थापित व शिष्ट मूल्य का मूल्यांकन; विनिमय– श्रम मूल्य का मूल्यांकन; उत्पादन– श्रम मूल्य का नियोजन; यही इनकी मौलिकता

इसकी निरंतरता हेतु शिक्षा–संस्कार व स्वास्थ्य संयम आवश्यकीय कार्यक्रम

इसी आधार पर अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था

5. मनुष्य की पहचान, महापुरूषों की पहचान

आदर्शवादी व भौतिकवादी दोनों परंपराएँ व्यक्तिवादी

सामान्य मानव द्वारा महापुरूषों की पहचान का आधार– भय मुक्ति व प्रलोभन/ मनोकामना प्राप्ति; जो ऐसा मुद्दा नहीं जिससे परम ज्ञान, विचार, आचरण समझा जा सके

समस्या– अपने को अविभाज्य रूप में अस्तित्व में समग्रता के साथ नहीं देख पाना

स्वयं को पहचानने की इच्छा रहते हुए भी इसकी गवाही नहीं दे पाना

दूसरे व्यक्ति को जागृत होने के लिए उपाय सहित बोध करा देना ही स्वयं जागृत रहने का व्यवहार रूप में प्रमाण

जानने, मानने, पहचानने, निर्वाह करने की संपूर्ण वस्तु= सत्ता में संपृक्त प्रकृति + अस्तित्व सहज सह–अस्तित्व रूपी गतिविधियाँ

शुभ चाहने का अधिकार हर मनुष्य में विद्यमान

अज्ञात को ज्ञात एवं अप्राप्त को प्राप्त करने की स्थिति सर्वसुलभ करने के लिए परंपरा का जागृत होना अपरिहार्य

परंपरा हेतु अस्तित्व सहज वैभव का चिंतन, साक्षात्कार, विचार, अनुभव, व्यवहार, व्यवस्था, संविधान, अध्ययन/शिक्षा–संस्कार/दर्शन ज्ञान सहज रूप में जीना, क्रियारत रहना अनिवार्य हो गया; इस क्रम में परमत्रय + जागृत परंपरा सर्वसुलभ होने का मार्ग प्रशस्त

अस्तित्व में प्रत्येक मानव द्रष्टा पद में; द्रष्टा पद की साक्षी में मूलभूत सिद्धांत–

मानव जाति एक कर्म अनेक; मानव धर्म एक मत अनेक; ईश्वर(व्यापक) एक देवता अनेक; धरती एक राज्य अनेक

प्रत्येक एक अपने वातावरण सहित संपूर्ण– इस क्रम में धरती भी एक इकाई

सत्ता में संपृक्त(चारो अवस्था) हर इकाई डूबा, भींगा, घिरा; महिमा बल संपन्नता के रूप में सर्वत्र अखंड होने के कारण सत्ता/व्यापक एक

मानव परिभाषा रूप में/मौलिकता पूर्वक एक; हर मानव कल्पनाशील, कर्मस्वतंत्र; मनाकार को साकार करनेवाला, मनःस्वस्थता का आशावादी; कर्म करते समय स्वतंत्र, फल भोगते समय परतंत्र; अतः हर मानव समान – मानव जाति एक

न्याय, धर्म, सत्य सहज कार्य व्यवहार का परिणाम= तत्काल और निरंतर सुख; मानव धर्म= सुख, जो सर्वतोमुखी समाधान पूर्वक प्रमाणित

मानव जीवन जागृति पूर्वक सर्वतोमुखी समाधान सहज अभिव्यक्ति

जागृत होना मानव की दीक्षा, अभीप्सा

जागृतिपूर्वक मानव ज्ञानत्रय संपन्न + मानवीयतापूर्ण आचरण + व्यवस्था में भागीदारी

मनुष्य ही जागृतिपूर्वक देवी, देवता पद में संक्रमित; यह जीवन जागृति क्रम में बोधगम्य; फलतः अज्ञात से मुक्ति

अखण्ड मानव समाज और राष्ट्र का फलन= समाधान, समृद्धि, अभय, सह–अस्तित्व= अप्राप्त की प्राप्ति

मानव धर्म सहज अखण्डता ही अखण्ड समाज और सार्वभौम व्यवस्था है।

मानव जाति मूलतः मानव धर्म के आधार पर आधारित, मानव धर्म के वैभव में ही मानव जाति की एकता अखण्डता स्पष्ट; कर्म आधारित जातियाँ, क्लेश का पुलिंदा

6. प्रकाशन और प्रतिबिम्ब

प्रत्येक एक प्रकाशमान; प्रकाशमानता के मूल में संपृक्तता, बल संपन्नता रहना; बल संपन्नता ही क्रियाशीलता का मूल तत्व; क्रिया= श्रम, गति, परिणाम

स्थिति= बल, गति= शक्ति; इकाई स्थिति एवं गति का अविभाज्य रूप; शक्तियाँ सम, विषम, मध्यस्थ रूप में प्रकाशित

इकाई= रूप, गुण, स्वभाव, धर्म

परस्परता में प्रतिबिम्बन वस्तु का परस्पर पहचानने का प्रमाण; गुण शक्तियों के रूप में एक दूसरे पर प्रभावित करना

जीव प्रकृति में मूल्यांकन (स्वभाव की पहचान) मैत्री और विरोध के रूप में (वंश परंपरा में, वंशों की परस्परता में)

मानव में स्वभाव का मूल्यों के रूप में आदान–प्रदान एवं धर्म/समाधान का परस्परता में मूल्यांकन

वस्तुओं की माप–तौल आवश्यकता और कल्पनाशीलता वश; रूप(आकार–आयतन घन) एवं गुण (सम, विषम) को मापना संभव

समझने की संपूर्ण वस्तु= सत्य त्रय

रूप के आधार पर पदार्थ अवस्था; रूप एवं गुण के आधार पर प्राणावस्था; रूप, गुण एवं स्वभाव के आधार पर जीवावस्था; रूप, गुण, स्वभाव एवं धर्म के आधार पर ज्ञानावस्था नियंत्रित

प्रतिबिम्बन मध्यस्थ स्थिति का द्योतक एवं परस्पर भास होने के लिए अतिआवश्यकीय तत्व

प्रतिबिम्बन परस्पर प्रकाशमानता और प्रकाश का ही स्वरूप; गति या दवाब नहीं

प्रत्येक वस्तु में निहित गुणों का परावर्तन; जैसे ऊष्मा, चुंबकीयता, विद्युत, भार ये सब एक दूसरे पर प्रभाव डालते हैं। प्रभाव क्षेत्र भी इन्हीं का वैभव है

तप्त बिम्ब की स्वभाव गति (जो विकास क्रम के अनुसार स्पष्ट है) स्थापित होने के लिए कम ताप वाले ग्रह–गोल द्वारा ताप का आबंटन; अतः पूरकता विधि से अधिक ताप से मुक्त होने की संभावना; अतः आवेश जितना अधिक, परमाणु के प्रजातियों की संख्या उतनी कम, ठंडा होने पर पूरक नियम से अनेक प्रकार के परमाणु का निर्माण

जिसके उपर प्रतिबिम्ब पड़ा रहता है, वह वस्तु भी प्रतिबिम्बित होने वाली, इस आधार पर अनुबिम्ब; प्रतिबिम्ब+अनुबिंब= प्रत्यानुबिंब

7. गुण, प्रभाव और बल

गत्यात्मक गति = सम–विषम गति

विषम गति ह्रास की ओर जबकि सम गति विकास और गुणात्मक विकास के क्रम में प्रमाणित

मध्यस्थ गति– यथास्थिति को बनाए रखने में, पोषण करने में

सत्ता में संपृक्त होना ही बल संपन्नता का सूत्र; बल अपने में स्थिति सहज व्याख्या; गति अपने में स्थानांतरण की व्याख्या, परिवर्तन का सूत्र

बल को दवाब एवं शक्ति को प्रवाह के रूप में पहचाना गया है।

बल ही गुणी के नाम से भी जाना जाता है क्योंकि गुणी एवं गुण की अविभाज्यता; बल ही गुणी व शक्ति ही गुण

शक्ति के मूल में बल, शून्याकर्षण की स्थिति में प्रत्येक  एक अपने स्थिति गति के अनुसार अक्षुण्ण = स्वभाव गति प्रतिष्ठा

शून्याकर्षण की स्थिति में सभी वस्तुएँ(स्वभाव गति/आवेशित गति) उसी ग्रह की वातावरण सीमा में रहते हैं।

प्रत्येक ग्रह गोल में किसी तादाद तक विकिरणीय द्रव्यों के रहते सभी अवस्थाओं का संतुलन रहना पाया जाता है।

अजीर्ण परमाणु अपने स्वरूप में विकिरणीय; विकिरणीय परमाणु में परमाणु सहज ऊष्मा/अग्नि अंतर्नियोजित

जो मूल वस्तु जिस वस्तु से बना रहता है, वह उसके मूल वस्तु के समान है।

रसायन क्रियाकलाप के होने के लिए भौतिकता की सानुकूलता आवश्यक

पदार्थ से प्राण=उदात्तीकरण; प्राण से पदार्थ= पूर्वोदात्तीकरण

प्राण अवस्था की परवर्ती रूप (गेहँ, दाल, चावल, फल, दूध, रस)= भौतिक वस्तुएँ

दो प्रजाति की प्राण कोषाएँ– बीजानुषंगी सूत्रः स्त्री पुरूष पराग; वंशानुषी सूत्रः डिम्ब शुक्र सूत्र, गर्भाशय में शरीर रचना

मानव शरीर रचना में समृद्धिपूर्ण मेधस; जीवन की पाँचों शक्तियाँ शरीर संचालन में प्रमाणित

मानवीय परंपरा की स्थापना क्रम में समाधानात्क भौतिकवाद

जो जिससे रचित होता है, मूलतः उतना ही होता है।

8. कृत्रिमता, प्रकृति, सृजनशीलता

कृत्रिमता– श्रम नियोजनपूर्वक वैसे परिवर्तन को लाने का प्रयास, जो परंपरा में सुस्पष्ट नहीं हो

सामान्य आकांक्षा व महत्वाकांक्षा की वस्तुओं का संवेदनशीलता की तृप्ति हेतु प्रयोग; मनुष्य ही इनका निर्माता, भोक्ता, व भ्रमवश दुरूपयोग करने वाला; दुरूपयोग= द्रोह, विद्रोह, शोषण, युद्ध कार्य; श्रृंगारिकता व अपराध का प्रचार

महत्वाकांक्षा की वस्तुओं से मानव की मानसिकता, कार्य और प्रवृत्तियों का ही गति, चित्रण

प्रवृत्तियाँ प्रलोभन, आस्था(स्वीकृत) एवं भय, संघर्ष(अस्वीकृत) के रूप में

अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था के पहले यंत्रों का उपयोग, सदुपयोग असंभव

सर्जनता– सर्जनता क्रम में मानव का श्रम नियोजन ही मूल तत्व; श्रम नियोजन पूर्वक प्रकृति सहज वस्तुओं पर वांछित, कल्पित स्वरूप देना

कृत्रिमता विकास और जागृति के प्रतिकूल; सर्जनता विकास और जागृति को प्रमाणित करने के लिए पूरक विधि से किया गया कार्य–व्यवहार

जीवन में अक्षय बल, शक्ति संपन्नता व शरीर में श्रम नियोजन क्षमता ही समृद्धि का आधार; समाधान सहित ही समृद्धि का अनुभव

कृत्रिम कृषि परंपरा, सड़क निर्माण आदि निरर्थक

सर्जनशीलता– कृषि कार्य; इस हेतु भूमि संरक्षण, जल संरक्षण, बीज संरक्षण, ऋतु–काल संयोग विधि(धरती–बीज संयोग विधि) को पहचानना

ईंधन संयोजन कृत्रिमता

वस्तु का निर्माण व संग्रह समाधान का आधार नहीं; मानव ही समाधान का आधार एवं द्रष्टा

कोई भी यंत्र विकास क्रम में सहायक सिद्ध नहीं; कृत्रिम बीज की परंपरा सिद्ध नहीं

बीज गुणनवर्द्धन हेतु अनुकूल वातावरण को स्थापित करना ही उपाय

खनिजीय, क्षार और अम्ल तत्वों द्वारा धरती की सतह उद्वेलित, उत्तेजनात्मक प्रभाव पौधों में पुष्टि के स्थान पर पिष्ट संग्रह; पुष्टि तत्व उतना ही, मात्रा(पानी) में वृद्धि

मात्रा में वृद्धि किंतु गुणवत्ता खराब(मानव शरीर के लिए प्रतिकूल), धरती को अम्लीय और क्षारीय बनाना

जैविक उर्वरक पहले से सुपाचित तथा अम्ल और क्षार का संतुलित अनुपात

प्रकृति सहज गुण प्रवर्तन, गति, बल, वैभव अभिव्यक्तियाँ प्राकृतिक; इन्हें कृत्रिम समझना अपराधी बनने/बनाने का आधार

सर्जनशीलता– पदार्थ अवस्था की वस्तुएँ संयोग से, योग से अपने स्वभाव गुण को संयोग गुण में व्यक्त करना सहज रहा; पदार्थ अवस्था की वस्तुओं का संयोग संयोजन पूर्वक आवास, अलंकार, महत्वाकांक्षी संबंधी वस्तुओं को पाने की संभावना थी ही

कृत्रिमता पूर्वक प्रकृति के साथ अपराध, मानव के साथ अपराध; फलस्वरूप अनेक प्रकार के शारीरिक, मानसिक रोग

स्वयं को अस्तित्व में अविभाज्य रूप में जानना, मानना, पहचानना व निर्वाह करना ही एकमात्र विधि

9. संकरीकरण और परंपरा

फल और फूल में संकरीकरण की दो विधि– अंकुर प्रत्यारोपण, तना प्रत्यारोपण

इनमें अधिकांश अपनी परंपरा को बनाये रखने में सफल नहीं; पुष्प में सुगंध तथा मकरंद व पराग की गुणवत्ता में क्षति; अतः पीढ़ी दर पीढ़ी प्रत्यारोपण की आवश्यकता

जीव कोटि में संकरीकरण पूर्वक आहार व जलवायु विधियों में परतंत्रता; जटिल रोग; आहार–संयम विधि से स्वस्थ रहने में असमर्थ; मानव को निरंतर ध्यान देते रहने की आवश्यकता; दूध ज्यादा, किंतु गुणवत्ता कम; वंश परंपरा यथावत नहीं

मनुष्य में जीवन में जागृति की आवश्यकता; संकरीकरण, क्लोनिंग शरीर की सीमा में गण्य; जीवन में समानता के आधार पर मानव में एकता, अखण्डता

मानव में कल्पनाशीलता व कर्मस्वतंत्रता मौलिक; जागृति विधि प्रणाली पूर्वक मानव को न्याय, धर्म, सत्य, समाधान, प्रामाणिकता पूर्ण परंपरा के रूप में प्रमाणित होने की आवश्यकता; यह परमत्रय पूर्वक प्रमाणित

रासायनिक द्रव्य– भौतिक वस्तुओं का उदात्तीकृत रूप; विभिन्न रसायनों के संयोगपूर्वक प्राणकोषाओं के रूप में रासायनिक रचना; इनमें प्राणसूत्र रचना कार्यकारी प्रवर्तन सहित समाया; रस में डूबी हुई स्थिति और ऊष्मा के दवाबवश ही रासायनिक द्रव्य से रचित प्राणकोषा श्वसन क्रिया सहित ही विपुलीकरण व रचना कार्य संपन्न करता है।

रसायन द्रव्य – ठोस, तरल, विरल

व्यवस्था– जड़–चैतन्य प्रकृति में वर्तमान सहज आचरण

प्राणावस्था की प्रत्येक रचना अपने में संपूर्ण रचना होते हुए अनेकानेक रचनाओं के साथ सह–अस्तित्वशील; बीज–वृक्ष न्यायपूर्वक निश्चित आकार व आचरण को प्रकाशित

किसी प्रजाति की सभी प्राण कोषाओं में प्राणसूत्र समान, इसी समानता के आधार पर निश्चित रचना

पदार्थ(परमाणु, अणु...) परिणामपूर्वक नियमित, इनमें नियंत्रण का सूत्र समाया

प्राण बीज–वृक्ष आवर्तनशीलता पूर्वक नियंत्रित(निश्चित फल, फूल, जड़, तना के रूप में रचनाएँ नियंत्रित)

जीवावस्था और ज्ञानावस्था की शरीर रचना में अंग, अवयव का संतुलन आवश्यक; आकार, आयतन कार्य के तालमेल के लिए अंग अवयवों की रचना निश्चित अनुपाती

जीवों का कार्यकलाप वंशानुसार निश्चित– यही संतुलन का तात्पर्य

प्रत्येक अंग–अवयव का अपना–अपना आकार वंश की प्रधान पहचान; जीवन द्वारा आशा का प्रसारण; शरीर को ही जीने की स्थली के रूप में स्वीकारना

मानव शरीर सप्तधातुओं की सर्वोच्च संतुलित रचना; मानव में 5 शक्तियों का क्रियाकलाप

इन सभी को समझने वाला मानव और दृश्य=सपूर्ण सह–अस्तित्व

जिस शरीर की रचना में सप्तधातुएँ अंग अवयवों के संतुलन के अर्थ में रचित हैं तथा समृद्ध व समृद्धिपूर्ण मेधस रहता है, उन शरीर के साथ जीवन का संयोग प्रमाणित

कृत्रिमता का आकार दे पाना पदार्थ अवस्था की वस्तुओं में संपन्न; प्राणकोषाएँ प्राकृतिक ही होती हैं।

प्रकृति– पहले से ही क्रिया के रूप में रहता है; इन क्रियाओं को मानव द्वारा भी घटित कराना प्राकृतिक ही

गठन में पूर्णता का होना उसी परमाणु में निश्चित क्रिया का परिणाम घटना

प्राणकोषा और जीवन को घटाना(घटित कराना/उत्पन्न करना) मानव द्वारा संभव नहीं, आवश्यक भी नहीं

ज्ञानावस्था के मनुष्य का जागृत होना ही एकमात्र लक्ष्य

10. उद्योग, आवश्यकता, संबंध, संतुलनः–

परिवार मानव विधि से मानव में आवश्यकताएँ प्रतीत(प्रत्येक रूप में प्रमाणित होने के प्रयास उदय)

आवश्यकता के आधार पर ही क्रियाएँ प्रमाणित; ऐसी प्रक्रियाएँ ही तकनीकी

इन प्रक्रियाओं को विधिवत प्रशिक्षित, शिक्षित, कर्माभ्यास करने का प्रावधान= तकनीकी, प्रौद्योगिकी, विज्ञान शिक्षा

यंत्र का नियंत्रण सुलभ, मानव का नियंत्रण सुलभ नहीं; अतः उद्योग व यंत्रों का स्वचालित होना सुगम– वर्तमान की मान्यता

मनचाहे उत्पादन और मनमाने लाभ के प्रति प्रतिबद्धतावश कार्यकर्ता एवं व्यवस्थापक के बीच बँटवारे को लेकर विरोध, संघर्ष; भय और प्रलोभन के आधार पर किये गए समझौते के फलस्वरूप क्षणिक संतुष्टि, ज्यादातर असंतोष

आवश्यकता के आधार पर ही सभी उद्योग स्थापित होना सहज; लाभोन्माद के आधार पर असंतुलन

उत्पादन और संतुलन सहज वैभव का मूल सूत्र

1. भय, प्रलोभन के स्थान पर न्याय
2. लाभोन्माद के स्थान पर आवर्तनशीलता
3. स्वयं व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदारी
4. श्रम मूल्य का मूल्यांकन
5. श्रम विनिमय
6. निपुणता, कुशलता ही मूल पूंजी
7. संग्रह के स्थान पर समृद्धि
8. हर परिवार मानव का उत्पादन में भागीदारी
9. हर परिवार में व्यवहार व उद्योग; परिवार व्यवस्था में भागीदारी

इनके मूल में ज्ञानत्रय संपन्न स्वायत्त मानव

जीवन में– कल्पनाशीलता और कर्मस्वतंत्रता; जानना, मानना, पहचानना, निर्वाह करना; 10 क्रियाएँ– जागृतिपूर्ण जीवन में प्रमाणित और जागृति हर व्यक्ति में संभावित

वस्तु और उपकरण पूर्वक अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था स्थापित नहीं

चयन–आस्वादन :– रूचिमूलक; कर्मेन्द्रिय द्वारा चयन एवं ज्ञानेन्द्रिय द्वारा आस्वादन अभिव्यक्त

तुलन–विश्लेषण :– प्रिय, हित, लाभ की दृष्टि; ये दृष्टियाँ किसी अंश में जीवों में भी क्रियाशील

आयाम– अनुभव, विचार, व्यवहार, कार्य

परिप्रेक्ष्य – व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र, अंतर्राष्ट्र

दिशा– परिवार, समाज, राज्य, व्यवस्था, प्रामाणिकता सहज दिशा

परस्पर समुदायों में स्वयं को श्रेष्ठ मानने (अहमता) के आधार पर व्यवहार में अनमेल (असहअस्तित्व); इनमें सामरस्यता हेतु कल्पना, तर्क, विज्ञान, विवेक, अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था रूपी प्रयोजन के अर्थ में समाधानात्मक भौतिकवाद प्रस्तुत

अस्तित्व में अनुभूति और प्रमाण रूप में स्वानुशासन ही जानने, मानने की तृप्ति बिन्दु

जागृति की ओर निर्देशित होना ही समाजिकता

परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था, व्यवस्था में भागीदारी पूर्वक सफल, इसी क्रम में मानवीयतापूर्ण आचरण (चरित्र, मूल्य, नैतिकता)

चरित्र– स्वधन(प्रतिफल, पारितोष, पुरस्कार), स्वनारी/स्वपुरूष, दयापूर्ण कार्य व्यवहार (मानवीयता का लोकव्यापीकरण एवं व्यवस्था, परंपरा में भागीदारी का निर्वाह)

दया :– पात्रतानुरूप वस्तु उपलब्ध कराना; समाधान, समृद्धि, अभय, सह–अस्तित्व ही मानवीय व्यवस्था में प्रमाणित संपूर्ण वस्तु; हर बच्चा इसके लिए पात्र; परंपरा में दयापूर्वक ये वस्तुएँ पीढ़ी दर पीढ़ी समर्पित

नैतिकता= तन, मन, धन रूपी अर्थ का सदुपयोग, सुरक्षा

तन= 5 ज्ञानेन्द्रिय + 5 कर्मेन्द्रिय का क्रियाकलाप

मन= ज्ञानत्रय संपन्नता, कम से कम जीवन ज्ञान संपन्नता

धन= उपयोगिता एवं कला मूल्य संपन्न वस्तुएँ

उपयोग= परिवार में अर्थ कानियोजन

सदुपयोग= परिवारमूलक स्वराज्य व्यवस्था में भागीदारी क्रम में अर्थ का नियोजन

प्रयोजनशीलता= जागृतिपूर्णता को प्रमाणित करने के क्रम में अर्थ का नियोजन

विकास और जागृति, कर्तव्य एवं दायित्व हेतु अर्थ का अर्पण ही सदुपयोग फलतः सुख

जिसके लिए अर्पित उसकी सुरक्षा फलतः पूरकता

सदुपयोग सुरक्षापूर्वक जनसंख्या नियंत्रण एवं पर्यावरण संतुलन

समाधान ही सुख एवं सौन्दर्य, फलतः मानव धर्म; शेष प्रकृति का निश्चित आचरण – इसे अध्ययन गम्य कराना ही समाधानात्मक भौतिकवाद का आशय

प्रयोजन प्रक्रिया सम्मत विधि पूर्वक ही व्यावहारिक होना प्रमाणित

मानव सहज प्रयोजन= जागृतिपूर्णता + प्रामाणिकता/स्वानुशासन, सर्वशुभ, अभ्युदय, मानवीय परंपरा; फलस्वरूप सभी समस्याओं से मुक्ति एवं समाधान सुलभ

चिंतन

चित्त में न्याय का साक्षात्कार/चिंतन, चिंतन में ही प्रयोजनों की अनुभवरूप में पहचान, न्यायपूर्वक अखण्ड समाज एवं परिवार मानव की कल्पना

चिंतन में प्रयोजन की पहचान कल्पनाशीलता के संयोग से ही

बोध

बोध– बुद्धि में; न्याय, धर्म, सत्य का बोध

धर्म= सार्वभौम व्यवस्था का बोध= सर्वतोमुखी समाधान को प्रमाणित करने के लिए संकल्पित होना

सर्वतोमुखी समाधान के रूप में संपूर्ण कल्पनाशीलता नित्य शुभ में परिणत/जागृत; यही कल्पनाशीलता का तृप्ति बिन्दु; व्यवहार में व्यवस्था एवं व्यवस्था में भागीदारी का प्रमाण

अनुभव

एक बार किसी मुहूर्त में अनुभवगम्य होने के उपरांत जीवन अनुभवमूलक विधि से व्यक्त; इसके पूर्व अनुभवगामी विधि से जागृति होती ही रहती है

जागृति क्रम में कंमशः मन, वृत्ति, चित्त, बुद्धि एवं आत्मा की क्रियाएँ जागृत; मानव संचेतना सहज तृप्ति, उसकी निरंतरता के रूप में अनुभव प्रमाणित

शास्त्र त्रय ही संयुक्त रूप में परंपरा, आयाम सहित अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था के रूप में जीने की कला को प्रमाणित करता है; मूल में ज्ञानत्रय

आवश्यकता, उत्पादन, संबंध और संतुलन

आवश्यकता का मूल रूप– परिवार इकाई

सदुपयोग ही सुरक्षा; मानव–मानव भय वश ही सदुपयोग एवं सुरक्षा संभव नहीं

आवश्यकता पूर्ति के क्रम में शेष प्रकृति पर श्रम नियोजन पूर्वक उत्पादन

उत्पादन व्यवस्था में भागीदारी के अर्थ में नियंत्रित

परस्पर पूरकता क्रम ही आवर्तनशीलता; जागृतिपूर्णता पूर्वक संपूर्णता सहज प्रयोजनों को ध्यान में रखकर पहचाना गया कार्यक्रम स्वतः आवर्तनशील

जागृति= ज्ञानत्रय के आधार पर समग्रता में जागृति; जागृतिपूर्वक युद्ध एवं अपव्यय समाप्त; सदुपयोग विधि में यंत्रों का उपयोग, प्रयोग, आवश्यकता न्यूनतम

समाज गति के अर्थ में, समाज रचना एवं व्यवस्था का तालमेल बनाए रखने के लिए यंत्रों/महत्वाकांक्षा के वस्तओं का प्रयोग

मानव ही द्रष्टा पद में एवं बहुआयामी अभिव्यक्ति

समझकर किया गया कार्य व्यवहार सफल; सफल = सर्वशुभ एवं व्यवस्थामें भागीदारी फलित/प्रमाणित

परंपरागत दोनों विधियों से व्यवस्था फलित नहीं फलतः मध्यस्थ दर्शन, सहअस्तित्ववाद

उन्मादत्रय ही अव्यवस्था का कारक

न्याय सुलभता से भोगोन्मादी एवं कामोन्मादी प्रवृत्तियाँ संयत; समग्र व्यवस्था में भागीदारी, समाधान, प्रामाणिकता से लाभोन्माद संयत; जागृतिपूर्वक निरंतर सही कार्य व्यवहार, अतः गलती की संभावना समाप्त

समुदाय भ्रमित होने के कारण मानव गलती कर सकता है यंत्र नहीं, ऐसा मानना

जागृत परंपरा रूपी लक्ष्य के संदर्भ में आवश्यकता, उत्पादन के लिए उद्योग तथा संबंध एवं संतुलन को बनाए रखना सुलभ

जागृतिपूर्वक मनुष्य व्यवस्था में संयत, आवश्यकता संयत, आवश्यकता से अधिक उत्पादन, समृद्धि का अनुभव, तन–मन–धन का सदुपयोग सुरक्षा; फलतः उद्योगों को मानव सहज आवश्यकता के अनुरूप निर्वाह करना

जीवन शक्तियाँ अक्षय, मानव में श्रमशीलता पूर्वक उत्पादन एवं सीमित आवश्यकता के योगफल में समृद्धि का अनुभव

नैसर्गिक एवं वातावरण संतुलन हेतु ऊर्जा के आवर्तनशील स्रोतों का प्रयोग

स्वस्थ शरीर हेतु पवित्र आहार पद्धति; सहज उपलब्ध जड़ी–बूटी से आक्रामक एवं संक्रामक रोगों का निवारण

आहार हेतु आवर्तनशील खेती– खाद, कीटनाशक, उर्वर भूमि (उर्वर संवहन प्रक्रिया पूर्वक ही धरती में हवा का संचार)

अम्ल एवं क्षार का पाचन विधि से निश्चित अनुपात– खाद

उर्वरक– प्राण अवस्था के अवशेष ही उर्वरक

रासायनिक खाद एवं कीटनाशकों का दूरगामी दुष्प्रभाव; प्राण अवस्था को पुनः खेत में ना डालने एवं क्षरण प्रणाली से मिट्टी की उर्वरकता का ह्रास

जागृतिपूर्वक धरती की क्षति को रोकना एवं भरपाई के उपाय सोचना सहज; ज्ञानत्रय पूर्वक सहअस्तित्व विधि से भरपाई संभव

खनिज, तेल, लोहा, कोयला गंभीर क्षति; उपाय– मिट्टी एवं ऊष्मा के संयोग से घर का निर्माण, जंगल में तैलीय वृक्षों को लगाना एवं इनसे चलने वाले यंत्र तैयार करना, प्रवाह शक्ति एवं सौर ऊर्जा से बिजली तैयार करने वाले यंत्र का निर्माण

तैलीय वृक्ष के धुएँ के पाचन में वनस्पतियाँ सक्षम जबकि खनिज तेल एवं कोयला के धुएँ के अधिकांश भाग को पचा पाने में असमर्थ

परिवारमूलक स्वराज्य व्यवस्था पूर्वक चारों मानव लक्ष्य पूरे, मानव नैसर्गिक मानव के रूप में प्रमाणित, सर्वमानव हेतु हर आयाम की नित्य सुलभता

11. भय, प्रलोभन / मूल्य, मूल्यांकन

भय– प्राकृतिक, पाशविक, मानव में निहित अमानवीयता का भय आदिकाल से; नस्ल, रंग, जाति, संप्रदाय, मत, पथ, पद, सुविधा–संग्रह के आधार पर मानव–मानव भय

भय से मुक्ति हेतु प्रलोभन (आदर्शवाद); भोग, संग्रह(भौतिकवाद); भोग, संग्रह हेतु संघर्ष फलतः भय; भोग का आधार– इन्द्रिय लिप्सा

व्यवस्था का विचार अस्तित्व मूलक मानव केंद्रित चिंतन से सर्वसुलभ, यह अस्तित्व में अविभाज्य मानव सहज अध्ययन

अस्तित्व सहअस्तित्व पूर्वक चार अवस्थाओं के रूप में; हर इकाई रूप, गुण, स्वभाव, धर्म संपन्न; त्व सहित व्यवस्था एवं समग्र व्यवस्था में भागीदार

नैसर्गिकता में पूरकता का निर्वाह= समाधान प्रमाणित

समाधान= पूर्णतात्रय और उसकी निरंतरता के अर्थ में प्राप्त अवधारणा

मानवीयता सहज जागृति का नित्य स्रोत= अस्तित्व, प्रक्रिया= सह–अस्तित्व, धारक–वाहक= मानव

मूल्य, मूल्यांकन सहित जीने की कलापूर्वक ही जागृति प्रमाणित

पूर्णता सहज अवधारणा एवं उसका प्रमाणरूपी आचरण= चारों अवस्थाओं का अंतर्संबंध और उसकी निरंतरता को मनुष्य द्वारा जानना, मानना, पहचानना, निर्वाह करना

नैतिकता के संतुलन में मनुष्य की भागीदारी स्पष्ट

उद्योगपूर्वक नैसर्गिक असंतुलन, जनसंख्या वृद्धि में भी मानव की ही भागीदारी

उद्योगपूर्वक प्राप्त वस्तु को आम आदमी द्वारा अपनाना; अपनाने का स्वरूप आवश्यकता से सुविधा, सुविधा से भोग, भोग से अतिभोग की ओर

मानव में गलती की समझ से पीड़ित हुए बिना गलती का सुधार नहीं; गलती की पीड़ा की समझ की स्थिति में ही सुधार की आवश्यकता स्वीकृत; तदनुरूप आवश्यकीय क्रियाकलाप का अपनाना

संप्रेषणा हेतु कारण, गुण, गणितात्मक विधि से विवेक और विज्ञान सम्मत तर्क प्रणाली को अपनाना

जीवन शक्ति में होने वाली सहज संप्रेषणा ही मानवीय आचरण, व्यवहार और व्यवस्था के रूप में प्रमाणित

मानव सहज जागृति ही मानवीयतापूर्ण व्यवस्था का आधार

अस्तित्व में संपूर्ण वस्तु अपने अपने स्वरूप में परिभाषित और आचरणपूर्वक वैभव के रूप में व्याख्यायित

निश्चयता, व्यवस्था समझ में आना ही परिभाषा, पद और अवस्था रूपी प्रतिष्ठा को व्यक्त करता है; व्याख्या महिमा एवं प्रयोजनों को व्यक्त करता है; अस्तित्व सहज स्थिरता की परिभाषा, निश्चयता ही व्याख्या है

मानव परंपरा में जीवन प्रमाणित जबकि जीवावस्था में शरीर सहत क्रियाकलाप प्रमाणित

जीवन जागृति= ज्ञानत्रय; द्रष्टा= मानव; जागृत मानव में न्याय धर्म सत्य से नियंत्रित प्रिय, हित, लाभ की दृष्टि

धातुओं के उपर लिखी हुई संख्या= मुद्रा; उन्हीं संख्याओं को कागज पर छापने से वह प्रतीक मुद्रा

प्रयोग(उपयोग, सदुपयोग) वस्तु का ही; मुद्रा/प्रतीक मुद्रा का नहीं; विकल्प में श्रम का नियोजन, श्रम मूल्य का मूल्यांकन और श्रम विनिमय

श्रम मूल्य का मूल्यांकन प्राकृतिक ऐश्वर्य पर श्रम नियोजन के आधार पर; विनिमय श्रम मूल्य के आधार पर– श्रम विनिमय, वस्तु विनिमय

व्यापार मूलतः उत्पादन नहीं है; व्यापार में लाभ की मानसिकता से श्रम का शोषण + मिलावट; व्यापार मानसिकता → ग्राम मूलक उत्पादन और समृद्धि सहज मानसिकता

परंपरा से अधिक व्यक्ति के जागृत होने की संभावना नित्य समीचीन; अतः अव्यवस्था सहज बहुल समुदाय परंपरा में व्यवस्था सहज जीना सहज

परमत्रय विधि से जीकर देखा गया; अनन्तर ही लिखने की प्रक्रिया

जीवन ज्ञान के साथ ही स्वायत्त मानव; जीवन ज्ञान एवं अस्तित्व दर्शन ज्ञान की संयुक्त महिमावश मानवीयतापूर्ण आचरण ध्रुवीकृत/समीकृत

इसके साथ ही परंपरागत दोनों विचारधारा का निग्रह बिन्दु समझ में आया एवं इनका समाधान समझ में आया– तत्पश्चात प्रस्तुति

जीवन ज्ञान के उपरांत– स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, रहस्य से मुक्ति, जागृत होकर देवी–देवता, अस्तित्व दर्शन सहज रूप में फलतः ईश्वर संबंधी रहस्य से मुक्ति; अस्तित्व ही सहअस्तित्व के रूप में समझ में आना

मानव सुखधर्मी– आशा/इच्छा के रूप में; रूचिमूलक जीने में एकरूपता, सार्वभौमता नहीं; सार्वभौम व्यवस्था को पहचानने के पक्ष में सर्वमानव में सुखापेक्षा एक मात्र सूत्र

ज्ञानत्रय को व्यवहार में प्रमाणित करना ही इनका लोकव्यापीकरण; परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था में भागीदार क्रम में समाधान, समृद्धि, अभय, सहअस्तित्व प्रमाणित

12 भौतिकता, अभिव्यक्ति, संस्कार और व्यवस्था

सत्ता में प्रकृति ही जीवन, जीवन में ही जागृति प्रमाणित; प्रकृति चार अवस्थाओं के रूप में; शेष प्रकृति नियमित, नियंत्रित, संतुलित

अभी हर समुदाय भय प्रलोभन की मानसिकतापूर्वक समर एवं संग्रह के चक्कर में; इनमें सफल समुदाय ही विकसित; सुविधा के स्रोत वन एवं खनिज; विज्ञान एवं तकनीकी, प्रौद्योगिकी, व्यापार पूर्वक इनका शोषण;

राज्य के साथ नौकरी की परिकल्पना; बहुमूल्य धातुरूपी मुद्रा सामरिक एवं सुविधावादी वस्तुओं के अनुपात में कम, अतः पत्र मुद्रा का प्रचलन

अभी तक व्यक्ति, परिवार, समाज के सुखी, सार्थक, समाधानित होने का स्वरूप नहीं निकला; भय के मूल में अमानवीयता; अमानवीयता= परपीड़ा, परधन, परनारी/परपुरूष, शोषण, व्यापार, नौकरी, युद्ध

अविश्वास एवं भय से पीड़ित होकर संग्रह से सुखी होने, राहत पाने का प्रयास; इस क्रम के ंपुनः अमानवीयता(उन्माद, युद्ध, पर्यावरण शोषण)

लोक रूचियों के अनुरूप वस्तुओं का उत्पादन, भंडारण, कलात्मक विधि से प्रस्तुति

चतुर व्यापारी– लाभोन्मादी विचार एवं प्रक्रिया में परिपक्व; प्रलोभन पूर्वक आम आदमी भी भागीदारी को तैयार

प्रलोभन एवं सुरक्षा आश्वासन पूर्वक राज्य एवं धर्म गद्दी के प्रति जनमानस समर्पित

वस्तुमूल्य यथावत, लाभ की मानसिकता से पत्र मुद्रा मूल्य में परिवर्तन; लाभ काल्पनिक, वस्तुएँ यथावत;

मानवीयतापूर्वक ही अमानवीयता से मुक्ति, न कि संसाधनों से; प्राणवायु एवं ओजोन परत के व्यतिक्रम को ठीक करने की जिम्मेदारी मानव की

मानवकृत समस्या– धरती का असंतुलन(वातावरण,ऋतु), प्रदूषण, अपराध, उन्माद, जनसंख्या वृद्धि, संघर्ष, युद्ध

निराकरण– मानवीयता पूर्ण जीने की कला विकसित करना आवश्यक, धरती के उपरी सतह से आवश्यकता पूर्ति आवश्यक

इसे प्रमाणित करने हेतु परिवारमूलक स्वराज्य व्यवस्था; जो जीवन ज्ञान, अस्तित्व दर्शन एवं मानवीयतापूर्ण आचरणपूर्वक सफल; अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था प्रमाणित; मानव ही देव मानव, दिव्य मानव फलतः नित्य शुभ, समाधान, सुख, सार्थक सौंदर्य बोध सबको सुलभ